RNI No. 7127/60

डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City / 411 2023-25

संघशक्ति

मासिक समाचार पत्रिका

वर्ष : 60 अंक : 05 प्रकाशन तिथि : 25 मई कुल पृष्ठ : 36 प्रेषण तिथि : 4 मई, 2023

शुल्क एक प्रति : 15/- वार्षिक : 150/- रुपये पंचवर्षीय 700/- रुपये दस वर्षीय 1300/- रुपये

यत्र योगेश्वरःकृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम।।18.78।

चांसलर्स स्वर्ण पदक की हार्दिक बधाई

हमारी बहूबेटी आकांक्षा देवड़ा धर्मपत्नी डॉ. अभितेज सिंह शेखावत (जयपहाड़ी, झुंझुनू) को श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर से पादप रोग विज्ञान (कृषि) में गेहूँ के धारीदार रतुआ रोग (पक्सीनिया स्ट्राइफॉर्मिस फॉर्मा स्पेसियेलिस ट्रिटिसाई) का व्यापिकी अध्ययन एवं प्रबन्धन विषय पर अनुसंधान कर पीएचडी करने व 89.10% अंको के साथ विश्वविद्यालय में प्रथम स्थान प्राप्त करने पर राज्यपाल स्वर्ण पदक से सम्मानित होने पर बधाई एवं शुभकामनाएं।

शुभेच्छु : बनारसी कंवर धर्मपत्नी स्व. ठा. पृथ्वी सिंह शेखावत (दादीसा),
संतोष राठौड़ - सतपाल सिंह शेखावत (सास-ससुर), डॉ. अभितेज सिंह शेखावत (पति),
अभिवीर सिंह शेखावत (देवर) एवं समस्त शेखावत परिवार, जयपहाड़ी, झुंझुनू, राजस्थान

मेवाड़ को भावी नेतृत्व प्रदान करने हेतु युद्ध के दौरान महाराणा प्रताप के प्राणों के रक्षार्थ अपने प्राणों की आहूति देने वाले युग-पुरुष झाला मान की जयन्ती (ज्येष्ठ शुक्ल द्वितीया) के अवसर पर सादर वन्दन, नमन ।

ठा. पुष्पेन्द्र सिंह झाला, कुं. भूपेन्द्र सिंह झाला, कुं. दिलीप सिंह झाला, कुं. हेमेंद्र सिंह झाला,
भ. पुष्पराज सिंह झाला, कुं. ऋतुराज सिंह झाला, कुं. सूरज भान सिंह झाला,
कुं. जयव्रत सिंह झाला , कुं. ध्रुवराज सिंह झाला, कुं. महेंद्र सिंह झाला
ठिकाना - भगोर, ऋषभदेव, उदयपुर

संघशक्ति

4 मई, 2023

वर्ष : 59 अंक : 05

-: सम्पादक :-

लक्ष्मणसिंह बेण्यांकाबास

शुल्क - एक प्रति : 15/- रुपये, वार्षिक : 150/- रुपये, पंचवर्षीय : 700/- रुपये, दस वर्षीय : 1300/- रुपये

विषय - सूची

☞ समाचार संक्षेप	✍	04
☞ चलता रहे मेरा संघ	✍ श्री भगवानसिंह रोलसाहबसर	07
☞ पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)	✍ चैनसिंह बैठवास	08
☞ गीता का पुनर्जन्म	✍ श्री चन्द्रप्रभ	11
☞ राजा जनक ने दिया शुकदेव को उपदेश	✍ उपनिषद कथा	16
☞ संत कवि महाराज साहब श्री चतुरसिंहजी....	✍ डॉ. कमलसिंह बेमला	18
☞ महान क्रान्तिकारी राव गोपालसिंह खरवा	✍ भँवरसिंह मांडासी	21
☞ क्रान्ति का महान नायक राजा देवीबक्षसिंह....	✍ गोपालसिंह	24
☞ क्रांतिकारी डूंगजी-जवारजी	✍ डॉ. मातुसिंह मानपुरा	26
☞ दहेज का टीका क्षत्रिय समाज का अभिशाप	✍ भंवरसिंह मांडासी	30
☞ अपनी बात	✍	33

समाचार संक्षेप

माननीय संरक्षक श्री के संग :

- 2 मार्च को केन्द्रीय कार्यालय 'संघशक्ति' जयपुर में श्री प्रताप फाउण्डेशन के तत्वावधान में जन प्रतिनिधियों की बैठक आयोजित की गई। इसमें समाज के वर्तमान व पूर्व सांसद, विधायक सम्मिलित हुए। माननीय संरक्षक श्री भगवानसिंह रोलसाहबसर ने कहा कि संघ संस्कार निर्माण का कार्य करता है और आपसे भी यह अपेक्षा है कि आप अपने कार्यों में संस्कारों की छाप छोड़ेंगे। बैठक में आर्थिक रूप से पिछड़ों के लिये मिले दस प्रतिशत आरक्षण को चौदह प्रतिशत करवाने तथा केन्द्र से भूमि व भवन की सीमा हटवाने में सहयोग करने को भी कहा गया।
- 6 मार्च को आलोक आश्रम बाड़मेर माननीय संरक्षक श्री की उपस्थिति में होली दहन तथा होली स्नेह मिलन कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। इसमें शहर मं रहने वाले स्वयंसेवक सपरिवार सम्मिलित हुए। बताया गया कि भक्त प्रहलाद की भाँति ईश्वर के प्रति समर्पित होकर न्याय के लिए सहयोगी बने इसी में होली मनाना सार्थक है।
- अपने गुजरात प्रवास के दौरान 10 मार्च को माननीय संरक्षकश्री बनासकांठा जिले के मोरवाड़ा में तथा साणंद में आयोजित स्नेह मिलन कार्यक्रमों में पहुँचे। संरक्षकश्री ने बताया कि स्वधर्म पालन ही सत्कर्म है, ऐसा पू. तनसिंहजी ने बताया है। संघ संस्कार निर्माण का कार्य कर रहा है और स्वधर्म पालन का पाठ पढा रहा है। उन्होंने कहा कि किए बिना कुछ होता नहीं और दिए बिना कुछ मिलता नहीं। अत: हमारे पास जो भी श्रेष्ठ है उसे देना सीखना है। श्रेष्ठता सत्संग के बिना नहीं आती अत: ईश्वर की कृपा प्राप्त करें। ईश्वर की कृपा तभी मिलेगी जब हमारा अन्त:करण निर्मल होगा। पू. तनसिंहजी का जन्म शताब्दी पर्व राजधानी दिल्ली में मनाने की राय बन रही है, उसके लिये निमंत्रण दिया गया।
- अपने गुजरात प्रवास में ही 11 से 13 मार्च तक सुरेन्द्रनगर स्थित संघ कार्यालय शक्तिधाम में एक विशेष शिविर का आयोजन हुआ। संघ में निरन्तरता के साथ कार्यरत रहने की आवश्यकता है, क्योंकि यह केवल एक सामाजिक संस्था नहीं है बल्कि मानव जीवन के परम लक्ष्य ईश्वर प्राप्ति का मार्ग है। इसलिए आत्मचिन्तन की आवश्यकता है कि संघ जो हमसे अपेक्षा करता है उसमें हम कितने खरे उतरे हैं। किसी समस्या के कारण यदि निरन्तरता नहीं रह पाती तो इसकी जानकारी संघ को होनी चाहिए, हम एक परिवार जो हैं। सत्संग और स्वाध्याय पर जोर दिया गया। संघ के अष्ट सूत्री कार्यक्रम की भी व्याख्या कर समझाया गया।
- 13 मार्च को शक्तिधाम में ही संघ के सहयोगियों तथा विभिन्न संस्थाओं से जुड़े समाज बन्धुओं का स्नेह मिलन कार्यक्रम रखा गया। गीता में वर्णित क्षत्रिय के गुणों का पालन करते हुए मानवता की सेवा में अपनी ऊर्जा लगाने पर जोर दिया गया।
- 15 मार्च को भावनगर के मेघाणी ऑडिटोरियम हॉल में पारिवारिक स्नेह मिलन का आयोजन रहा। संरक्षकश्री ने क्षत्रिय जाति के जीवन को त्यागमय बताया। इसी कारण क्षत्रिय सभी का रक्षण-पोषण करता रहा। आज देखें तो सत्ता पर तो सबकी नजर है लेकिन न त्याग है और न रक्षण-पोषण हेतु जीवन व्यवहार। श्री क्षत्रिय

युवक संघ त्यागमय सेवा के चिन्तन को जागृत करने में कार्य कर रहा है। अनेक विशिष्ट जन तथा विभिन्न सामाजिक संगठनों के प्रतिनिधियों ने कार्यक्रम में उपस्थिति दी।

- 16 मार्च को गुजरात प्रवास के पश्चात उदयपुर पहुँचने पर अशोक नगर स्थित अलख नयन मंदिर में पारिवारिक स्नेह मिलन आयोजित हुआ जिसमें समाज बन्धुओं सहित मातृशक्ति की उपस्थिति रही।
- 17 मार्च को चित्तौड़गढ़ पहुँचकर अनेक गणमान्य व्यक्तियों से भेंट हुई तथा 18 मार्च को जौहर श्रद्धांजलि कार्यक्रम में सम्मिलित हुए।
- 19 मार्च को चित्तौड़गढ़ के ब्रह्मपुरी विस्तार सेंथी में स्थित नवप्रभा में होली स्नेह मिलन को सम्बोधित करते हुए संरक्षकश्री ने कहा कि क्षत्रिय के जीवन सम्बन्धी भूतकाल से प्रेरणा लेकर भविष्य का निर्माण करने हेतु श्री क्षत्रिय युवक संघ की स्थापना की। संघ आज उसी मार्ग पर चल रहा है। पू. तनसिंहजी के जन्म शताब्दी वर्ष के उपलक्ष में होने वाले कार्यक्रम में सम्मिलित होने हेतु निमंत्रण भी दिया।
- 19 मार्च को ही संरक्षक श्री चित्तौड़गढ़ से किशनगढ़ पहुँचे जहाँ श्री प्रताप फाउण्डेशन का दो दिवसीय चिन्तन शिविर आर.के. कम्यूनिटी सेंटर में चल रहा था। आपने कहा कि हमारा जीवन तभी महत्त्वपूर्ण बनता है जब वह संसार के लिये बन जाए। इस मार्ग पर ही चलना है और इसमें मन थके नहीं, कदम बढते रहें।
- 26 मार्च को श्री प्रताप युवा शक्ति व राजस्थान सड़क सुरक्षा सोसायटी द्वारा सड़क सुरक्षा अग्रदूत प्रशिक्षण का आयोजन किया गया। इसमें 200 युवकों ने सड़क सुरक्षा अग्रदूत के रूप में प्रशिक्षण लिया। माननीय संरक्षकश्री का सान्निध्य प्राप्त हुआ।
- 27 मार्च को दिल्ली में क्षत्रिय सांसदों का स्नेह भोज कार्यक्रम आयोजित रहा। संरक्षकश्री ने संघ की कार्य प्रणाली, आवश्यकता तथा वर्तमान समय में सांघिक शक्ति के महत्त्व पर विचार रखे। उन्होंने कहा कि संघ समाज को मातृ स्वरूपा मानकर उसकी सेवा करने का प्रशिक्षण देता है। उपस्थित सांसदों ने ऐसे उत्तम कार्य में यथासंभव सहयोग देने की बात कही।

माननीय संघप्रमुखश्री के संग :

- 5 मार्च को जालौर की संभागीय बैठक में संघप्रमुखश्री का सान्निध्य प्राप्त हुआ। सामूहिक संस्कारमयी कर्मप्रणाली का महत्त्व दर्शाते हुए संघप्रमुखश्री ने कहा कि मानव स्वभाव पर बुराई के आकर्षण से आई गन्दगी को हटाने हेतु निरन्तर साधना की आवश्यकता तो है ही, यदि यही सामूहिक रूप से की जावे तो अच्छी तरह फलित होती है। संघ में इसके साथ-साथ एकांतिक साधना भी बनाये रखनी है।
- 9 मार्च को संघप्रमुखश्री बेणेश्वर (डूंगरपुर) पहुँचे जहाँ होली स्नेह मिलन का भव्य आयोजन रहा। संघप्रमुखश्री ने कहा कि व्यष्टि से समष्टि और समष्टि से परमेष्टि तक पहुँचने का मार्ग श्री क्षत्रिय युवक संघ का है और इसी के माध्यम से पू. तनसिंहजी ने कौम की वंदना का मार्ग सुझाया। संघ साधना उपासना का ही मार्ग है। अपना आचरण श्रेष्ठ बनाकर समाज व सभी के हित में हम जीवन लगाएँ यही संघ सिखाता है। ऐसे जीवन वालों के अनुशासित संगठन की आज महत्ती आवश्यकता है, वही कार्य संघ करने में लगा हुआ है।

- 10 मार्च को कुम्भा सभागार, बी.एन. युनिवर्सिटी उदयपुर में आयोजित स्नेह मिलन कार्यक्रम में संघप्रमुखश्री ने कहा कि परिवार, जाति, धर्म और राष्ट्र आदि किसी भी बंधन से क्षत्रियत्व की सीमा नहीं बंधती। प्राणी मात्र को अपना मानकर उसके लिये जीवन जीने का भाव ईश्वरीय भाव है और यह भाव ही क्षत्रियत्व की कसौटी है। पू. तनसिंहजी के जन्म शताब्दी वर्ष में होने वाले कार्यक्रमों की रूपरेखा भी प्रस्तुत की गई।
- नागौर जिले के बनवासा गाँव में रा.उ.मा.वि. में आयोजित लोकार्पण समारोह में संघप्रमुखश्री ने कहा कि हम अन्यों को जिस साधना से गुजारना चाहते हैं, पहले स्वयं को उस राह पर चलना होगा। यदि नेतृत्व करना है तो व्यवहार में शुचिता लाना आवश्यक है। स्थानीय सामाजिक व राजनैतिक सर्व-समाज के लोग उपस्थित थे।
- नीमकाथाना स्थित तंवरावाटी राजपूत छात्रावास में पू. तनसिंहजी के जन्म शताब्दी वर्ष में होने वाले कार्यक्रमों की श्रृंखला में 22 मार्च को होली स्नेह मिलन कार्यक्रम का आयोजन हुआ। संघप्रमुखश्री ने कहा कि संघ को यदि भली प्रकार समझना है तो संघ की शाखा में आना, संघ का शिविर करना, संघ साहित्य का अध्ययन करना होगा। केवल चिन्तन नहीं, चिन्तन को जीवन में उतारना होगा।

अन्य कार्यक्रम :

- होली स्नेह मिलन कार्यक्रमों के माध्यम से संघ कार्य में गति लाने हेतु अनेक कार्यक्रम हुए। दुर्गा महिला शाखा भायंदर, 4 व 5 मार्च को नारायण निकेतन बीकानेर, 6 मार्च को माँ सा मोती कंवर शाखा बीकानेर, 5 मार्च को स्नेह मिलन सीकर, नारायण शाखा भायंदर, मुंबई की कई शाखाओं, 7 मार्च को सूरत की पद्मिनी शाखा, 8 मार्च को सूरत स्थित वीर अभिमन्यु शाखा, पुणे की दुर्गामाता शाखा, गोकुलपुरा (जयपुर) की दुर्गादास शाखा, 12 मार्च को जयपुर संभाग का होली स्नेह मिलन, 19 मार्च को सागवाड़ा तथा 26 मार्च को जामनगर कन्या छात्रावास में स्नेह मिलन समारोह सम्पन्न हुए। 26 मार्च को कुचामन सम्पर्क यात्रा का कार्यक्रम रहा।
- क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन के तत्वावधान में 5 मार्च को ऑन लाइन वेबीनार का आयोजन हुआ जिसका प्रसारण यू-ट्यूब व फेसबुक पेज पर किया गया। प्रतिष्ठित संस्थाओं में 12वीं कक्षा के बाद प्रवेश परीक्षा की जानकारी समाज के विद्यार्थियों हेतु दी गई। सीकर में क्षत्रिय कर्मचारी होली सम्मेलन का आयोजन 12 मार्च को हुआ। 28 फरवरी को फालना व पाली में बैठक सम्पन्न हुई। 5 मार्च को चावण्डिया (नागौर) में फाउण्डेशन की बैठक सम्पन्न हुई। 26 मार्च को बीकानेर में क्षत्रिय अधिवक्ता सम्मेलन तथा उसी दिन बीकानेर में राजपत्रित अधिकारियों का सम्मेलन भी आयोजित हुआ। 26 मार्च को नागौर जिले के ई-मित्र संचालकों की बैठक सम्पन्न हुई।
- 28 फरवरी को सीकर तथा 4 मार्च को पाली में श्री प्रताप फाउण्डेशन के तत्वावधान में अधिवक्ताओं की बैठकें सम्पन्न हुई। 5 मार्च को डीडवाना में प्रताप फाउण्डेशन की बैठक हुई। प्रताप युवा शक्ति ने 5 मार्च को भीलवाड़ा में रक्तदान शिविर का आयोजन किया।

चलता रहे मेरा संघ

{उच्च प्रशिक्षण शिविर, आलोक आश्रम बाड़मेर में 29 मई, 2022 को माननीय संरक्षक श्री भगवानसिंह जी रोलसाहबसर द्वारा प्रदत्त प्रभात संदेश}

प्राचीनकाल में जब वन क्षेत्र में गुरुकुल चला करते थे, वहाँ विद्यार्थी विद्याध्ययन करने जाया करते थे। गुरुकुलों में कहीं कम और कहीं अधिक संख्या में विद्यार्थी अध्ययन करने पहुँचा करते थे। जैसे हम सैंकड़ों की संख्या में यहाँ प्रशिक्षण ले रहे हैं। कुछ ऐसे गुरुकुल भी थे जिनमें हजारों की संख्या में विद्यार्थी अध्ययन करने जाते थे। ८० हजार और ८८ हजार तक की संख्या का वर्णन आता है। विद्याध्ययन जैसे-जैसे पूरा होता था, उतने-उतने विद्यार्थियों को गृहस्थ में प्रवेश करने के लिये गुरुकुल से विदा किया जाता था। उनकी विदाई के समय उपदेश दिया जाता था कि आज तक जो मैंने तुम लोगों को कहा है, उसका जीवन में पालन करना। यहाँ पर तो आज तक मैं आप लोगों की देखभाल करता था कि कोई भटक न जाये। अब आप जहाँ जाएँगे वहाँ यदि मुझे पाओगे तो देखभाल करने वाला मैं ही रहूँगा। मुझे पाने का अर्थ है जो मैंने कहा है उसका पालन करते रहना। लेकिन यदि उसे भूल जाओगे, उसका पालन नहीं करोगे तो भटक जाओगे।

यही बात श्री क्षत्रिय युवक संघ हमको कहता है कि इस शिविर में इतने दिन हमने अपने उद्देश्य को समझने के लिये, अपने मार्ग को समझने के लिये, अपने समाज की स्थिति को समझने के लिये जो उपदेश सुने हैं, जो चर्चाएँ की हैं, उन सबको स्मरण रखना और जीवन में ढालना तुम्हारा काम है। श्री क्षत्रिय युवक संघ कहता है-सदैव जागते रहो, सावधान रहो। यहाँ संस्कारों का जो बीज पड़ा है, वह अंकुरित होगा, हुआ भी है। वह पल्लवित होगा और जैसे छोटे पौधे के लिये बहुत दुश्मन हैं, उसको मिटा देने के लिये बहुत शत्रु हैं। यह बात आपके लिये भी लागू होती है। हम सबके लिये लागू होती है। आप में अंकुरित होने वाले व पल्लवित होने वाले पौधे रूप संस्कारों को मिटा देने के लिये बाहरी वातावरण की गर्म हवाएँ चलेंगी। आपको अपने उस पौधे की रक्षा करनी है। लोग विरोध भी करेंगे, पर घबराना नहीं है।

यदि क्षत्रिय युवक संघ के उद्देश्य व निर्देशों को हमने ग्रहण किया है तो उसका स्मरण करेंगे, उस पर चलते रहने का अभ्यास करेंगे तो सभी प्रकार का भय आपसे दूर भाग जाएगा। 'भूत प्रेत निकट नहीं आवे, महावीर जब नाम सुनावे।' आपने जो संघ से सुना है वही आपको महावीर बना देता है, दृढ संकल्पधारी बना देता है तब ये विरोधीपिशाच, आपको मिटा नहीं सकेंगे, आपके निकट भी नहीं आ सकेंगे, किसी भी प्रकार की क्षति नहीं पहुँचा सकेंगे। बस संघ ज्ञान को स्मरण रखना, जीवन में ढालने का अभ्यास करते रहना। यह जो ज्ञान हमने यहाँ प्राप्त किया है, वह ईश्वरीय ज्ञान है। अत: ईश्वर हमारी निश्चित रूप से रक्षा करेगा। विपरीत परिस्थितियों में आप घबराना मत, शस्त्र मत डाल देना, उन विपरीतताओं में भी अभ्यास चालू रखें, यही हमारी तपस्या होगी, यह तपस्या ही हमारी रक्षा करेगी।

भगवान आप सबका कल्याण करें। इस शिविर के विदाई समारोह से पूर्व यह अन्तिम प्रभात संदेश श्री क्षत्रिय युवक संघ की ओर से दिया जा रहा है। इसको याद रख लेंगे तो भी काम चल जाएगा। एक-एक बात जो श्री क्षत्रिय युवक संघ के इस शिविर में हमने सुनी है उसे याद रख लें। हमारे सहायक अधिक हैं तो चंद शत्रु भी हैं। लेकिन यदि आपको ऐसा लगे कि शत्रु बहुत हैं तो यह आपकी कमजोरी होगी। यह विचार ही नहीं लाना है, ऐसा समझना ही नहीं है कि आपका कोई सहायक नहीं है। ईश्वर से बड़ा कोई भी सहायक नहीं होता, सहारा देने वाला नहीं होता। हम गिर जाते हैं तो वो उठाता है, हम मार्ग भटक जाते हैं तो वो हमको मार्ग बताता है। वो ही हमारा सहायक है। आज का यह मंगल संदेश याद रखेंगे तो आपकी रक्षा होगी। श्री क्षत्रिय युवक संघ के इस प्रांगण में आज यह अन्तिम उपदेश, आदेश, प्रभात संदेश हम पा रहे हैं। **जय संघशक्ति!**

गतांक से आगे

पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)

''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

– चैनसिंह बैठवास

साधारणतया हर व्यक्ति में अपने परिवार के प्रति प्रेम व आत्मीयभाव देखा जाता है। यदा-कदा इस जगत में ऐसे व्यक्तियों का भी अवतरण होता आया है जो अपने परिवार के ही नहीं, जगत के भी प्यारे होते हैं। जगत ही उनका परिवार होता है। अपने परिवार को ही नहीं, पूरे जगत को अपना ही परिवार मानने वाले साधारणजन नहीं, वे महापुरुष होते हैं जो पूरे जगत को अपने हृदय के आत्मीय भाव से सींचते हैं। पूज्य श्री तनसिंहजी भी इन्हीं महापुरुषों की श्रेणी में आते हैं।

सबको राह पर रखने वाला, प्रजा का पालन-पोषण और रक्षण का उत्तरदायित्व निभाने वाला, सबको साथ लेकर चलने वाला, सबको सम्भालने वाला, साधू-सन्तों व सज्जनों का आश्रयदाता, सदैव सत्य-न्याय और धर्म का हिमायती, दुष्टों और दुर्जनों का संहारक, आन-बान-मान और मर्यादा के लिये अपना सर्वस्व न्योछावर करने वाला, स्वाभिमानी क्षत्रिय समाज अपनी संजीवनी शक्ति ''क्षात्र शक्ति'' विस्मृत कर धर्मच्युत होकर अपनी विशिष्टता खो तमोगुण से आक्रान्त हो गया। क्षत्रिय की इस जड़ता-जन्य विकृतियों से सामाजिक ढांचा अस्त-व्यस्त हो गया। सभी व्यवस्थाएँ छिन्न-भिन्न हो गयी।

यह जगत पूज्य श्री तनसिंहजी का परिवार था। इस परिवार के प्रति उनका अगाध प्रेम व आत्मीय सम्बन्ध था इसलिए अपने परिवार (जगत) की ऐसी क्षत अवस्था देख पूज्य श्री का हृदय वेदना से भर उठा और उन्हें छोटी उम्र में ही अहसास हो गया था कि जगत उनके लिए नहीं है अपितु वे जगत के लिए हैं। जगत की व्यथा ने ही उन्हें जगत के बीच ला खड़ा कर दिया। जगत की दुःख की हालत के प्रति हृदय में उपजी पीड़ा ने ही पूज्य श्री तनसिंहजी को ''क्षात्र शक्ति'' के अभ्युदय के लिये प्रेरित किया। जगत के दुःखों का निवारण ''क्षात्र शक्ति'' के अभ्युदय से ही हो सकता है इसलिए वे ''क्षात्र शक्ति'' के अभ्युदय के लिए कृत-संकल्प हो उठे। यह काम तमोगुण से आक्रान्त सुप्त समाज को जागृत करने से ही हो सकता था लेकिन बिना संगठित शक्ति के समाज जागरण संभव नहीं था इसलिए पूज्य श्री तनसिंहजी ने समाज जागरण के लिये एक संगठित शक्ति की आवश्यकता महसूस कर 22 दिसम्बर, 1946 को श्री क्षत्रिय युवक संघ की स्थापना की।

पूज्य श्री तनसिंहजी का समाज के प्रति अगाध प्रेम व आत्मीय भाव था इसलिए पूज्य श्री ने अपने समाज के सम्बन्ध में कहा-''मैंने छोटी अवस्था में ही समाज की दुःख भरी अवस्था देखी। जितने आँसू मैंने अपने और अपने कुटुम्ब के लिये नहीं बहाए, उतने अपने समाज के लिये बहाए। समाज की व्यथा से व्यथित होकर मैंने अपना विद्याध्ययन, विवाह, नौकरी, कुटुम्ब पालन और जीवन के समस्त व्यापार समाज के चरण वन्दना में समर्पित कर दिये।''

श्री क्षत्रिय युवक संघ पूज्य श्री तनसिंहजी का परिवार है, कुटुम्ब है और इस कुटुम्ब के प्रति उनका अगाध प्रेम व आत्मीय सम्बन्ध था। पूज्य श्री ने अपने इस कुटुम्ब के प्रति अगाध प्रेम दर्शाते हुए कहा-

''भगवान राम के केवल एक ही हनुमान थे और मैं अपने चारों ओर सैकड़ों हनुमान देखता हूँ। भगवान राम के एक ही भरत थे और मुझे इस संसार में भरत

के सिवाय दूसरे कोई दिखाई नहीं देते। भगवान राम एक लक्ष्मण के लिए संजीवनी चाहते थे और मैं सैकड़ों के लिये चिन्तित हूँ। भगवान राम और मुझमें अन्तर इतना ही है कि वे एक आराध्य देव थे और मैं उनके वंश के अदने से अदने व्यक्ति का भी भक्त हूँ।''

पूज्य श्री तनसिंहजी के साथ अपने जीवन के बिताये विलक्षण क्षणों को याद कर एक स्वयंसेवक बताते हैं :-

''मैं हनुणन्त राजपूत हॉस्टल जोधुपर में पढता था, यहाँ संघ की शाखा लगाया करते थे। रविवार के दिन हम बाहर शाखा लगाया करते थे। रविवार का दिन था। संयोगवश पूज्य श्री तनसिंहजी जोधपुर आये हुए थे। चौपासनी स्कूल परिसर के बाहर एक झील के किनारे शाखा लगी। चौपासनी स्कूल के विद्यार्थी भी इस शाखा में आये हुए थे। मेरे जुकाम लगी हुई थी। दो-तीन बार मुझे छींके आई। वे (पूज्यश्री) इसे नोट कर रहे थे। शाखा सम्पन्न होने के बाद वापस चलने की तैयारी में थे। हमें तो हनुवन्त राजपूत हॉस्टल वापस आना था जो चौपासनी स्कूल से बहुत दूर था। चौपासनी स्कूल वालों को तो वापस चौपासनी स्कूल ही जाना था जो उनके नजदीक ही थी। वापस चलने के लिये ज्योंहि मैंने साईकिल पकड़ी तो तनसिंहजी ने मेरा हाथ पकड़ लिया और कहा-तुम तो बिमार हो, साईकिल पर बैठो, साईकिल मैं चलाऊँगा। तनसिंहजी उस वक्त सांसद थे। उस झील से इतनी दूर हनुवन्त राजपूत हॉस्टल तक वे मुझे साईकिल पर बैठाकर लेकर आये। रास्ते में तनसिंहजी को ट्रेफिक वाले सैलूट मार रहे थे। मुझ में उस समय क्या बीत रही थी, मैं ही जानूं। मैं महसूस कर रहा था कि ये साईकिल चला रहे हैं, यह तो मैं स्वयं भी चला सकता हूँ, साईकिल लेकर भी तो आया हूँ। क्या मैं इस बात को कभी जिन्दगी में भूल सकता हूँ? कभी नहीं!

''मैं जोधपुर पढने आया। सर्दियों में रजाई की जरूरत पड़ी। घर से समाचार आया, रजाई वहाँ ही बनवा लो। मुझे पता नहीं था कि रजाई कितनी लम्बी-चौड़ी होती है। मैंने अपना दिमाग लगाया-मैं फुट-डेढ फुट का चौड़ा हूँ, तो छः ईंच इधर व छः इंच उधर और लम्बाई में भी छः ईंच इधर और छः ईंच उधर करके रजाई बनवा ली। एक दिन तनसिंहजी आ गये। रजाई हमारे पास एक और वह भी एक के लिये भी छोटी पड़ रही थी। हम दोनों सो गये। मुझे थोड़ी देर बाद नींद आ गई। रजाई मेरे पर डाल दी और वे रात भर ठण्ड में जगते रहे। क्या इस बात को मैं कभी जिन्दगी में भूल सकता हूँ, कभी नहीं। ऐसा मातृत्व भाव तो क्या कोई ऐसी माँ से दूर रह सकता है?''

सन् 1975 की घटना-पूज्य श्री तनसिंहजी ने चौपासनी स्कूल की व्यवस्था में अपने कुछ व्यक्तियों को काम का जिम्मा सौंपा जिनमें से कुछेक अपनी जिम्मेदारी निभाने में नाकाम रहे। जब पूज्य श्री तनसिंहजी को उनकी असलियत का पता चला तो उनके विरुद्ध सख्ती बरती गई। वे सख्ती से बौखला गये और अपने जैसे आप मतलबी, अहंकारी, महत्त्वाकांक्षी व निष्क्रिय लोगों को साथ लेकर कभी फोन पर कीचड़ उछालना, तो कभी फोन पर झूठी अफवाह फैलाकर गुमराह करने जैसी बेहूदी हरकतें करने लगे।

एक दिन पूज्य श्री तनसिंहजी के पास फोन आया। फोन पर बताया कि फैक्ट्री में कर्मचारियों में झगड़ा हो गया। इस झगड़े में (एक स्वयंसेवक) बुरी तरह घायल हो गया। उस वक्त वह स्वयंसेवक जयपुर में फैक्ट्री में इंजीनियर था। यह समाचार सुनते ही पूज्य श्री तनसिंहजी व पूज्य श्री नारायणसिंहजी रेड़ा ने जीप से जयपुर जाने की तैयारी की और मुझे यह समाचार देने के लिये स्वयंसेवक के ससुराल भेजा। मैं बस द्वारा वहाँ पहुँचा और उनके श्वसुर को घटना की जानकारी दी। पूज्य श्री तनसिंहजी व पूज्य श्री नारायणसिंह जी

रेड़ा जीप से जयपुर पहुँचे और स्वयंसेवक को सकुशल पाया तो उनके जी में जी आया।

पूज्य श्री तनसिंहजी से मैंने कई बार सुना-''मुझे पृथ्वीसिंह (पूज्य श्री के पुत्र) की चिन्ता नहीं, इनकी (मेरी) चिन्ता है।'' मैं कहाँ का, वे कहाँ के, फिर भी मेरी चिन्ता। यह है पारिवारिक भाव।

पूज्य श्री तनसिंहजी ने अपनी आत्मकथा में लिखा है-''मुझे कोई पूछे कि तुम्हारी प्रिय वस्तु क्या है, तो मैं नि:संदेह बिना झिझक यही कहूँगा-भगवान की बात तो नहीं करता, क्योंकि उसके हाथ तो बहुत लम्बे हैं, वह सर्वशक्तिमान भी है, लेकिन उसके सिवाय मुझे इस दुनिया में प्रिय लगने वाले मेरे साथी ही हैं।''

यह दर्शाता है-पूज्य श्री का अपने स्वयंसेवकों के प्रति प्यार व अंतरंग सम्बन्ध। यह है पारिवारिक भाव।

पारिवारिक भाव श्री क्षत्रिय युवक संघ में पूज्य श्री तनसिंहजी ने पैदा किया। कौन कहाँ जन्मा है, किसकी क्या उम्र है, किसकी क्या एजुकेशन है, आर्थिक क्षमताएँ सबकी अलग हैं, कोई कहाँ का तो कोई कहाँ का, फिर भी एक परिवार के भाव में रंगे हुए। परिवार के अलावा दूसरा कोई भाव नहीं आता।

पूज्य श्री तनसिंहजी के साथ चलने वालों की हर तकलीफ का वो ध्यान रखते थे। इतना ही नहीं, उस तकलीफ को दूर करने के लिये उन्हें भी गाईड करते थे और वे स्वयं भी उस तकलीफ के निवारण का प्रयास करते थे।

पूज्य श्री तनसिंहजी के व्यवहार में माता का वात्सल्य एवं पिता का दायित्व दोनों समाहित थे। उनमें गुरु का गुरुत्व व सखा जैसा हास परिहास दोनों समाहित थे और वे यथायोग्य दोनों का उपयोग अपने साथ चलने वालों के निर्माण के लिए किया करते थे।

पूज्य श्री तनसिंहजी ने जीवन भर अपने साथ आने वाले लोगों को अपने हृदय से सींचा, ऐसा मातृत्व, ऐसा अपनत्व का व्यवहार किया, ऐसा व्यवहार कौन दे सकता है, जिनकी तपस्या हो, वही ऐसा भाव दे सकता है, ऐसा व्यवहार कर सकता है। पूज्यश्री के भाव से, इस व्यवहार से श्री क्षत्रिय युवक संघ का विस्तार हो रहा है और नये-नये आयाम आ रहे हैं-प्रताप फाउण्डेशन आ रहा है, प्रताप युवा शक्ति आ रहा है, क्षात्र पुरुषार्थ फारण्डेशन आ रहा है। पूज्य श्री तनसिंहजी ने जो काम किया है-हर एक के कल्याण के लिये किया है, केवल राजपूत जाति के लिये ही नहीं, हर वर्ग और जाति के लिये। इसलिए आज वे उनके पीछे चलने वाले हर साथी के आराध्य बन गये।

(क्रमश:)

प्रेम का प्याला किसने नहीं पिया? लेकिन इस प्याले में दो गुण हैं-एक अमृत और दूसरा विष। पीने वाला इसी प्याले को अमृत बना सकता है और इसी को विष। यही विचित्रता है। प्रेम सबके हृदय में है, किन्तु यह कहीं उत्साह तथा हँसी प्रदर्शित करता है और कहीं निराशा या तड़पन। कहीं उत्सर्ग और सौन्दर्य की छटा दिखलाता है और कहीं स्वार्थपरता तथा लोलुपता को। कहीं प्रेम है, कहीं आसक्ति। कहीं अनुराग है, कहीं तीव्र आकर्षण युक्त मोह। पहला अमृत है और दूसरा मरणात्मक विष। पहला शान्ति है और दूसरा अशान्ति का स्रोत, यही तो भेद है।

– श्री प्रताप नारायण

गीता का पुनर्जन्म

– श्री चन्द्रप्रभ

आज हम एक ऐसे नव्य और भव्य शिखर की ओर कदम बढ़ा रहे हैं, जहाँ से सुख, शान्ति और समृद्धि की हवाएँ सारे विश्व तक पहुँच रही हैं। यों तो धरती पर शिखरों के नाम पर हजारों शिखर हैं, किन्तु हम जिस शिखर की चर्चा कर रहे हैं, उसकी तुलना केवल उसी से की जा सकती है। हिमाच्छादित गौरीशंकर शिखरों का वह शिखर है, जहाँ सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् का संगान है, जहाँ से सत्य की ऋचाएँ, शिवम् के मंत्र और सौंदर्य की कला सारे संसार को उपलब्ध हुई है। गौरीशंकर का आनन्द, उसका वैभव अप्रतिम, अनुपम और अनूठा है। गीता संसार का वह गौरीशंकर है, जिसने शताब्दियों तक मनुष्य को अपने अधिकारों के लिये संघर्षरत और अपनी आत्म-विजय के लिये सन्नद्ध रहने की प्रेरणा दी है, इसलिए गीता का मार्ग योद्धाओं का मार्ग है। यह उन अर्जुनों का मार्ग है, जिनसे न केवल महाभारत का, वरन सारे विश्व का सम्बन्ध है।

गौरीशंकर की तरह गीता का भी कोई सानी नहीं है। गीता मानवीय शास्त्रों की कुंजी है। यदि पिटकों का सत्य ढूंढना हो, तो वह गीता में मिल जाएगा। आगम-सिद्धान्त भी गीता में प्रतिपादित हैं। वेद और उपनिषद् का नवनीत भी गीता में आत्मसात् हुआ नजर आएगा। जिस तरह गौरीशंकर में सारे शिखर आकर मिल जाते हैं, उसी तरह गीता में मनुष्य से जुड़ा सारा उपदेश समाविष्ट हो जाता है।

वह कंठ ही क्या, जिसने गीता का अपने जीवन में गायन न किया। वे कदम ही क्या, जो गीता के मार्ग पर न चलें। वह वाणी धन्य हो जाती है, जिसे गीता का रसास्वादन हो जाता है। उस व्यक्ति का घर धन्य है, जिसको सुबह उठते ही मंदिर का घंटनाद सुनाई देता है और सोने से पहले गीता जैसे धर्मग्रन्थ का श्लोक श्रवण करने को मिलता है, दिव्य ज्ञान के 'दो शब्द' सुनने-पढ़ने को मिलते हैं। आम आदमी की रातें असफल होती हैं, लेकिन इन सूत्रों और श्लोकों को दिन-भर अपने चिन्तन और मनन में रखने वालों की रातें असफल नहीं हो सकतीं। भगवान करे, आपकी रातें भी सफल हों। विकारों में तो हर आदमी की रातें गुजरती हैं, लेकिन जीवन के ऐश्वर्य-ईश्वर के रसास्वादन में जिनकी रातें गुजरती हैं, वे रातें भले ही अमावस्या जैसी ही क्यों न हों, असल में पूजन जैसी हैं।

अगर तुम हिन्दू हो, इसलिए गीता के साथ प्रेम रखते हो, तो गीता के साथ अन्याय कर जाओगे। अगर जैन हो और उस नाते गीता को अस्वीकार करते हो, तो ऐसा करके तुम गीता को नहीं, वरन् अपने जीवन के अन्तर्सत्यों को अस्वीकार कर बैठोगे। इस्लाम के अनुयायी होने के कारण गीता से परहेज रखोगे, तो कुरआन के संदेशों को समझने में तुमने चूक खाई है। जैनत्व, हिन्दुत्व, बौद्धत्व, इस्लाम ये सब छिलके हैं। किसी भी फल का महत्त्व छिलकों में नहीं होता। छिलकों को एक तरफ करो और गूदे को स्वीकार करो। शक्ति गूदे में है। मनुष्य को छिलके इतने लुभाते हैं कि भीतर का पदार्थ गौण हो जाता है। अगर तुम छिलकों को एक तरफ रख कर गीता को सुनोगे, उसका आचमन करोगे, तो वह एक महान चमत्कार घटित कर सकती है। यह गीता जीवन में वह अन्तर-रूपान्तरण कर देगी, जिसके अभाव में हम जन्म-जन्मान्तर भटकते रहे हैं।

गीता का जन्म नि:संदेह महाभारत के समय हुआ। अगर कृष्ण चाहते, तो गीता का यह संदेश वे अर्जुन को किसी कक्ष अथवा गुरुकुल के प्रांगण में बैठकर दे सकते थे, लेकिन ऐसा नहीं किया। कृष्ण का जन्म तभी होता है, जब किसी के हृदय में अर्जुन का जन्म

होता है। जब तक तुम अर्जुन नहीं बनते, संसार में कृष्ण का अवतार नहीं होगा। अगर ऐसा लगता हो कि तुम्हें अपने जीवन में श्रीकृष्ण नहीं मिले, तो मैं कहूंगा कि तुम जीवन में कभी अर्जुन बने ही नहीं। तुम अर्जुन बनो, तो कृष्ण को जन्म लेना ही होगा। कृष्ण-नाम की चदरिया ओढ़ लेने भर से कृष्ण के दर्शन नहीं होंगे। अर्जुन का जन्म होने से ही कृष्ण का जन्म होता है। ठीक वैसे ही जैसे बच्चे के जन्मने से माँ की छाती में दूध उत्पन्न होता है। मुझे लगता है कृष्ण फिर-फिर जन्म ले रहे हैं। अगर चूक हो रही है, तो अर्जुन को पैदा होने में चूक हो रही है।

कृष्ण ने गीता का बखान युद्ध के मैदान में किया और उस धुरन्धर से किया, जिसकी प्रत्यंचा मात्र से सारा संसार कम्पित हो जाता था। महाभारत का समय तो अब नहीं है। संदर्भ भले ही बदल गए हों, लेकिन हर शख्स के भीतर महाभारत होते हुए मैं साफ-साफ देख रहा हूँ। सबके भीतर महाभारत मचा हुआ है, उथल-पुथल है। इससे कोई इनकार नहीं कर सकता। हर व्यक्ति के भीतर एक रावण बैठा है, जो सीता का अपहरण करना चाहता है; एक दुर्योधन द्रौपदी का चीरहरण करना चाहता है; एक कंस केवल अपनी रक्षा और समृद्धि के लिये औरों के साथ खिलवाड़ करता है; एक शिशुपाल अपने स्वाभिमान, अपने घमण्ड को औरों पर छाँटने के लिये उनकी उपेक्षा कर रहा है। गीता की सार्थकता इसी में है कि आप अपने भीतर के महाभारत को पहचानें।

त्रेता के राम की आँखों में,
आँसू का निर्झर पलता था।
सीता का आँचल इसीलिए,
करुणा से भीगा लगता था।।
सारा द्वापर ही उलझ गया,
नारी के बिखरे बालों में।
ज्योति तो कम, पर धुआँ बहुत
उठता था जली मशालों में।।

त्रेता और द्वापर युग के वे घटनाक्रम आज भी दोहराए जा रहे हैं। हम सबके भीतर एक शैतान, एक दु:शासन बैठा है, जो औरों की इज्जत लेने में ही अपनी प्रतिष्ठा समझता है, एक शकुनि आसीन है, जो स्वार्थ, छल, प्रपंच के दुश्चक्र चला रहा है। इसलिए गीता की प्रासंगिकता आज भी है और भविष्य में भी तब तक रहेगी, जब तक मनुष्य के भीतर स्वार्थ के शकुनि और दुश्चक्र के दुर्योधन बने रहेंगे। गीता तुम्हें लड़ने की बात सिखाती है, स्वार्थ और दुश्चक्र से युद्ध करने की। गीता निश्चित तौर पर योद्धाओं का मार्ग है। जब तक तुम स्वयं योद्धा नहीं बनते हो, तब तक गीता को सुनना सार्थक कहाँ है। गीता को सुनना है, तो रग-रग में, नस-नस में योद्धा का स्वर चाहिए। ऐसे क्षत्रियत्व का रक्त चाहिए, जिस पर गीता के वे संदेश प्रभावी हो सकें। राजस्थान की यह माटी कितनी ही शान्त क्यों न हो, पर जब-जब भी यह माटी जागती है, तब-तब राजस्थान रणबांकुरों की धरती बन जाता है। मैं चाहता हूँ कि रणबांकुरों की यह धरती औरों से लड़ने के लिये नहीं, वरन् औरों का दिल जीतने के लिये आगे आए। मैं एक ऐसे युद्ध की प्रेरणा दे रहा हूँ, जो हिंसा का नहीं, स्वयं हिंसा से लड़ने का युद्ध है, जो आतंक का, अपराध का युद्ध नहीं, स्वयं अपराध और आतंक से लड़ने का युद्ध है। एक ऐसा युद्ध जो अयुद्ध का वातावरण बनाए। तुम्हें अरिहन्त बनाए।

जो मानव-जाति आज अपने से ही पलायन करती जा रही है, मुझे उसी मानवजाति को सम्बोधित करना है। इसलिए मुझे सुनार और लुहार दोनों का काम करना होगा। मुझे तो वह मंगल-कलश निर्मित करना है, जिसको कि सारी दुनिया अपने शीश पर उठा सके और फिर-फिर किसी भगवान बाहुबली का अभिषेक कर सके। इस मंगल-कलश को बनाने के लिये मुझे जहाँ माटी को हाथ का सहारा देना होगा, वहीं ऊपर से उसकी पिटाई भी करनी होगी। केवल प्यार से घड़े नहीं बनते, केवल दुलार से जीवन नहीं

बनता, उसके निर्माण के लिये योद्धा का स्वर भी चाहिए, विजय की संकल्प-शक्ति भी चाहिए। अच्छा होगा, मुझे अपने अन्त:करण तक आने दें, भीतर के कुरुक्षेत्र में, जहाँ महाभारत जारी है।

मुझे याद है कि एक सन्त को बीसवीं बार न्यायालय द्वारा छ: माह के कारावास की सजा सुनाई गई। एक सन्त और बीस-बीस बार जेल की हवा खाए, यह तो घोर आश्चर्य की बात थी। न्यायाधीश भी चकित था।

न्यायाधीश ने सन्त से कहा कि एक सन्तवेशधारी जेल में जाए, यह मुझे बर्दाश्त नहीं होता। आप अपनी आवश्यकताएँ मुझे बताएँ, ताकि मैं उन्हें पूरा कर सकूं। सन्त ने मृदुल मुस्कान के साथ कहा-'मैं चोरी स्वयं के लिये नहीं करता। मैं तो चोरी इसलिए करता हूँ, ताकि बार-बार जेल जा सकूं और वहाँ बन्द पड़े कैदियों को उस संदेश का स्वामी बना सकूँ, जिससे वे अपने बन्धनों को, तमस को नीचे गिरा सकें।'

मैं आप लोगों को ऐसे ही संदेश देना चाहता हूँ, उन संदशों का संवाहक बनाना चाहता हूँ, जिन संदेशों से आप अपनी कायरता को पहचान सकें, बुजदिली का बोध पा सकें, जीवन में फिर एक बार क्षत्रियत्व जाग सके, व्यक्ति-व्यक्ति अर्जुन बन सके। आप चाहे ब्राह्मण हों, वैश्य हों या चाहे जिस जाति के हों, आप में क्षत्रियत्व जगना जरूरी है।

जब भी किसी जिन और विश्व-विजेता का जन्म होगा, तो उसमें क्षत्रियत्व का जन्म होना जरूरी है। जैनों के सारे तीर्थंकर क्षत्रिय ही थे। जब महावीर किसी ब्राह्मणी की कोख से जन्म लेने वाले थे, तो इन्द्र का आसन भी कम्पायमान हो उठा। एक तीर्थंकर ब्राह्मणी की कोख से जन्म ले रहा था, यह एक अपूर्व प्रसंग था। तीर्थंकर ब्राह्मण के घर जन्म नहीं ले सकता और न वैश्य के घर ही। ब्राह्मण आदमी जोखिम नहीं उठा सकता और वैश्य व्यक्ति साहस नहीं कर सकता। ये सब तो क्षत्रिय ही कर सकता है। राजपूताने की माटी जगे। वैश्य तो पहले सोचेगा कि इसमें नफा है या नुकसान। क्षत्रिय आदमी यह व्यवसाय नहीं करता। उसके लिये तो जीवन भी एक युद्ध है। इसी कारण महावीर को ब्राह्मणी की कुक्षि से क्षत्राणी की कुक्षि में लाया गया।

महायुद्ध को जीतने के लिये संकल्प चाहिए, जोश और क्षत्रियत्व चाहिए। तभी महासमर को पार कर सकते हो। पुरुषों में फिर से जगे कोई महाराणा, कोई शिवा और कोई सुभाष, फिर से जगे नारी में कोई लक्ष्मीबाई। पर बाहर के युद्ध के लिये नहीं, भीतर के युद्ध के लिये। भीतर के महासमर को जीतने के लिये वीरत्व चाहिए। महावीरत्व, ऐसा महावीरत्व, जैसा महावीर ने कहा, जिससे वे जीत सके खुद को, संसार के हृदय को।

देखो, तुम्हारी स्थिति कैसी बनी हुई है? ठीक वैसी ही, जैसी अर्जुन की थी, जब उसने युद्ध-भूमि में आमने-सामने अपने ही सगे-सम्बन्धियों को खड़े पाया। महाभारत, फिर भी सुस्त, ढीले-ढाले! तुम्हारे लिए ही गीता का आह्वान हो रहा है, गीता के सूत्रों पर प्रकाश डाल रहा हूँ। सच में गीता को जन्म लेना होगा, पर उससे पहले तुम्हें भी एक नया जन्म लेना होगा, एक पुनर्जन्म स्वीकार करना होगा, ऐसा जन्म कि हम अपने जीवन को पुन: गढ़ सकें, उसका उद्धार कर सकें। गीता पहले अर्जुन के लिये जन्मी थी, अब उसे व्यक्ति-व्यक्ति से जुड़ना है, व्यक्ति-व्यक्ति के हृदय में साकार होना है। यह मत सोचना कि गीता जन्म ले चुकी है, गीता तो हर रोज, हर पल जन्म लेती है, तब-तब जन्म लेती है, जब-जब भीतर में अर्जुन का आविष्कार होता है।

गीता का मार्ग धारा का मार्ग नहीं है। यह तो राधा का मार्ग है। धारा तो बहती है। धारा के साथ बहना, यह कोई हमारे भुजाओं का सम्मान नहीं है। गीता का मार्ग तो संघर्ष का मार्ग है और संघर्ष का मार्ग राधा होने से होगा। राधा के मायने धारा का

विपरीत रूप होना ही है। धारा के साथ बहना समर्पण है और धारा का राधा हो जाना गंगासागर से गंगोत्री की यात्रा है। गंगोत्री से गंगासागर जाना हो, तो हर कोई बिना पतवार के पहुँच ही जाएगा, पर अगर गंगासागर से गंगोत्री की यात्रा करनी हो, तो बड़ी मुश्किल है। इसीलिए मैंने कहा, 'गीता गौरीशंकर है, गीता शिखर है, स्वर्ण-शिखर।' शिखर का चढ़ना जैसे दुरूह होता है, वैसी दुरूहता गीता को पचाने में भी है। मेरी पुरजोर कोशिश होगी कि गीता आपको पच जाए, आप चाहे किसी भी धर्म के अनुयायी क्यों न हों, मेरे लिये गीता में कोई विरोधाभास नहीं है। गीता हर वर्ग के लिये है, हर 'आश्रम' के लिये है। गृहस्थ और संन्यास दोनों ही मार्ग इससे प्रशस्त हुए हैं।

गीता को अगर आन्तरिक जीवन से जोड़ दो, तो गीता पूरी तरह महावीर की वाणी बन जाएगी और महावीर की संपूर्ण वाणी को अगर बाह्य जीवन के साथ जोड़ दो तो वह भगवत गीता बन जाएगी। विरोधाभास तो हमारी समझ में है। हमने छिलकों को बहुत महत्त्व दे दिया, इसलिए महावीर की धारा अलग लगती है और राम-कृष्ण, जीसस और सुकरात की धाराएँ जुदा जान पड़ती हैं। आपने अब तक कुंए, नहरें और नदियाँ ही देखी हैं, पर मैंने तो गंगासागर को निहारा है, उसका स्वाद चखा है। वही गंगासागर जिसमें सारी नदियाँ, सारी नहरें आकर समाविष्ट हो जाती हैं। वह गंगासागर कोई और नहीं, यह गीता ही है, जिसमें मुझे बहुत सारे सत्यों का संगान, उनका कलरव सुनाई पड़ता है। चाहे वे वेद या उपनिषद् की ऋचाएँ हों, चाहे आगम के सूत्र हों या बुद्ध के पिटकों की गाथाएँ, सभी कमोबेश यहाँ मिल जाएँगे। अपने हृदय के द्वार खोलिए; अपने तर्क वाले दिमाग को वहीं छोड़ आइए, जहाँ आपने अपनी चरण-पादुकाएँ खोली हैं, ताकि गीता की ये रश्मियाँ अपनी दस्तक वहाँ दे सकें, रोशनी फैला सकें।

गीता का शुभारम्भ बड़े मंगल शब्दों से हुआ है। गीता का पहला चरण है- धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे। कितनी सटीक, कितनी सुन्दर बात है। कुरुक्षेत्र ही धर्मक्षेत्र है। कहा जाता है कि किसी ने कुरुक्षेत्र की एक यात्रा कर ली, उसके सात जन्म टल जाते हैं। क्या आप उसे वह कुरुक्षेत्र समझ रहे हैं, जहाँ दुर्योधन और दु:शासन की लाशें बिछी थीं? मैं तो उस कुरुक्षेत्र की बात कर रहा हूँ, जो मनुष्य के भीतर है। उसका अपना अन्तर-धरातल ही वह कुरुक्षेत्र है, जिसकी माटी को यदि तुम अपने शीश पर, सहस्रार पर लगाते हो, तो यह किसी तीर्थ की स्पर्शना से कम नहीं है।

कृष्ण कहते हैं-'तुम्हारा अन्तर्हृदय ही कुरुक्षेत्र है और वही धर्मक्षेत्र भी।' कृष्ण उसी युद्ध के प्रांगण में खड़े होकर एक युद्ध का आह्वान करते हैं। वह आदमी ही क्या, उस आदमी का पौरुष ही क्या, जो लड़ न सका। लड़ो, अपने-आप से। बाह्य युद्ध तो अब बहुत हो चुके। बाह्य युद्ध में तो अन्ततः हार ही होगी। महान् कहलाने वाला सिकन्दर भी हार गया। तुम किसी से भी न हारो, मगर मौत से तो हार ही जाओगे। मैं तो विजय की बात करता हूँ, जिसके आगे मौत भी परास्त हो जाए। तब मनुष्य की मृत्यु नहीं होती, मृत्यु से पहले निर्वाण-महोत्सव हो जाता है, ईश्वरत्व मुखरित हो जाता है, सम्बोधि और मोक्ष उपलब्ध हो जाता है।

बाहर का युद्ध तो अहंकार-युद्ध है, जिसकी अन्तिम परिणति तो पराजय ही है। 'ईगो' की लड़ाई तुम्हें कब तक जिताती रहेगी? आखिर तो हारोगे ही। अहंकार टूटेगा, तो तुम भी टूट ही जाओगे। वह युद्ध ही क्या, जो पराजय दे। जीवन कोई पराजय का उपक्रम नहीं, यह तो विजय की दास्तान है। इसलिए वह युद्ध लड़ें, जो हमें अपने-आप को जिता दे। आदमी अपने क्रोध से लड़े, जिस क्रोध ने सारे घर में कोहराम मचा रखा है, उन विकारों से लड़े, जिनके चंगुल में फँसकर मनुष्य अपने वास्तविक मूल्यों को पहचान नहीं पाता, उस स्वार्थ से संघर्ष करे, जिसके चलते मनुष्य अपने पड़ोसी का भी ख्याल नहीं रख

पाता। यदि बाहरी युद्ध ही करते रहे, तो ये युद्ध कोई समाधान नहीं दे पाएँगे।

राजनेता कबूतर तो शान्ति के उड़ाते हैं, पर उनकी योजना बमों की होती है। आज सारे संसार ने अपने विनाश के लिये इतने इन्तजाम कर लिए हैं कि इस सृष्टि को एक बार नहीं, कई-कई बार नष्ट किया जा सकता है। जरा कल्पना कीजिए कि जब एक अणु बम से सारा नागासाकी ध्वस्त हो सकता है तो आज तो कई राष्ट्रों के पास हजारों-हजार ऐसे बम मौजूद हैं। हमारी हालत तो लिक्विड ऑक्सीजन में गिरे व्यक्ति जैसी हो गई है। ऑक्सीजन मरने नहीं देगी और लिक्विड जीने नहीं देगी। हम न तो पूरी तरह मर पा रहे हैं और न पूरी तरह जी पा रहे हैं। जी इसलिए रहे हैं कि मौत नहीं आई और मर इसलिए रहे हैं कि जीने की कला नहीं सीख पाए। हम तो दोनों से ही वंचित हैं। जीवन नरक बना है। जीवन स्वर्ग नहीं बन पाया, आनन्द का महोत्सव नहीं बन पाया। क्या तुम्हारी स्थिति कहीं अधर में लटके त्रिशंकु जैसी तो नहीं बन गई है?

तुम्हारे लिये जीवन समय गुजारना भर है। सत्संग भी तुम्हारे लिये ऐसे ही हो गया है कि सेवानिवृत्त व्यक्ति आए और समय गुजारे। समय गुजारने के लिये ही गीता को सुनते हो, तो गीता तुम्हारा कल्याण नहीं करेगी। तब एक बार नहीं, जीवन-भर गीता को पढ़ लो तो भी गीता जीवन के लिये सार्थकता का सूत्र नहीं दे पाएगी। समय गुजारने के लिये मत पढ़ो, समय को सार्थक करने के लिये गीता का सान्निध्य लो, सान्निध्य लो तथा गीता का आकंठ पान करो।

केवल बाहर के कोहराम, बाहरी संघर्ष से जीवन सार्थक नहीं होगा। शान्ति के कबूतर उड़ाने की परम्परा, शान्ति की प्रार्थनाएँ बहुत फीकी पड़ चुकी हैं। अब तो एक जीवन्तता चाहिए। अपने ही अन्त:करण में उतरने का एक अभ्यास, एक ललक, एक प्यास चाहिए। दृढ़ संकल्प भरा व्यक्तित्व चाहिए।

युद्ध बाह्य नहीं, चित्त की वृत्तियों से हो, स्वयं के तमस से हो। क्रान्ति हो अंधकार में प्रकाश हो। बाह्य युद्ध से समस्याओं का समाधान नहीं हो सकता। कृष्ण अन्तरमन में चल रहे युद्ध को जीतने की प्रेरणा देते हैं। वे अन्तर-युद्ध के प्रेरक हैं। अर्जुन तो एक प्रतीक है वीरत्व का, क्षात्रत्व का, फिसलने का। कृष्ण की गीता को आज इस संदर्भ में लिया जाना चाहिए। हर व्यक्ति युद्ध-विजेता बने, अन्तरमन का विजेता बने, आत्म-विजेता बने।

कृष्ण अगर युद्ध के प्रेरक बन रहे हैं, तो जरूर इसमें कोई रहस्य छिपा होगा। वे अगर किसी की मटकी फोड़ते हैं, तो यह किसी को नुकसान पहुँचाना नहीं है। भगवतकृपा हुई कि मटकी फूटी। पाप की मटकी उसने फोड़ी। कृष्ण ने जिसकी मटकी फोड़ दी, उसका तो निस्तार ही हुआ। कृष्ण अवतार हैं, तीर्थंकर की आत्मा हैं, शान्तिदूत हैं। अन्तरमन को जीतना ही गीता की आत्मा है।

हम सब मिलकर इस दुनिया को अमन-चैन दें, जिसके साये में सारी धरती महक उठे हम अपने हाथों से इस धरती को जन्नत बनाएँ। मरने के बाद आप किस स्वर्ग में जाएँगे, मुझे नहीं मालूम, मगर इतना मालूम है कि स्वर्ग धरती पर बन सकता है, जिसकी ताबीर, जिसकी शुरुआत आपके हाथों से हो। अगर तुम इस धरती को स्वर्ग बना लो, तो तुम्हें किसी दूसरे स्वर्ग की आवश्यकता नहीं होगी। धर्मराज और इन्द्र अपने कथित स्वर्ग की चिन्ता करें, हम तो यह सोचें कि यह धरती कैसे स्वर्ग बन पाए, जिस पर हम जीते हैं। भगवान करे, आप इस धरती को स्वर्ग बनाकर जाएँ। ऐसा स्वर्ग कि आप में इसी धरती पर आने की तमन्ना जगे। हमारे स्वर्ग का इन्तजाम हम खुद करें, स्वर्ग को अपने हाथों से अपने सामने बनाएँ।

– संकलित

राजा जनक ने दिया शुकदेव को उपदेश

– उपनिषद कथा

प्राचीनकाल में शुकदेव नाम के एक महान् तेजस्वी मुनि हुए थे। शुकदेव के बारे में ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने जन्म लेते ही समस्त ब्रह्म-विद्याओं को जान लिया था। वे आत्मा के स्वरूप को पहचान गए थे। आश्चर्य की बात तो यह है कि उन्होंने ब्रह्म-विद्या किसी दूसरे व्यक्ति से नहीं सीखी थी। अपने ही विवेक से उन्होंने मनन-चिंतन द्वारा ब्रह्म-विद्या को सीख लिया था। वे हमेशा ही कुछ न कुछ नया ज्ञान प्राप्त करने के प्रयास में लगे रहते थे। ऐसी ही ज्ञान-पिपासा की तृप्ति के लिये वे एक बार अपने पिता श्रीकृष्ण द्वैपायन (महर्षि वेदव्यास) के पास मेरु पर्वत पर पहुँचे।

महर्षि वेदव्यास उस समय स्थिर चित्त होकर ध्यान में मग्न थे। शुकदेव ने उनके समीप जाकर भक्तिपूर्वक प्रश्न किया-''भगवन्, मैं आपसे यह जानने के लिये आपके पास आया हूँ कि यह जगत्-प्रपंच कैसे उत्पन्न हुआ, फिर किस प्रकार यह विलीन हो जाता है, यह क्या है, किसका है, कब हुआ? सब कुछ समझाइए।''

यह सुनकर पिता वेदव्यास ने शुकदेव को, जो कुछ वे जानते थे, सब समझा दिया। शुकदेव ने सोचा-'ये बातें तो मुझे पहले से ही मालूम थीं उन्होंने कौन-सी नई बात बता दी।'' यही सोचकर शुकदेव ने पिता की बातों का विशेष सम्मान नहीं किया।

वेदव्यास शुकदेव के मनोभाव से उनके विचार जान गए, अत: उनसे बोले-''वत्स! सच तो यह है कि मैं तत्त्व रूप से इन बातों को नहीं जानता, इसीलिए तुम्हें ठीक से नहीं समझा पाया तुम ऐसा करो, मिथिलापुरी चले जाओ वहाँ के राजा जनक हैं, जो एक श्रेष्ठ ब्रह्मज्ञानी हैं। राजा जनक से तुम्हें सभी प्रश्नों का सही उत्तर मिल जाएगा।''

पिता की अनुमति लेकर शुकदेव मिथिलापुरी पहुँचे। लोगों से पूछते हुए वे राजा के द्वारपालों तक पहुँचे और उनके द्वारा राजा जनक को अपने आने का संदेशा पहुँचाया। शुकदेव की परीक्षा लेने के लिये राजा जनक ने बड़ी लापरवाही से केवल इतना ही कहा कि उनसे कहो अभी वहाँ प्रतीक्षा करें। द्वारपालों ने जाकर शुकदेव से वहीं प्रतीक्षा करने के लिये कह दिया। शुकदेव वहीं बैठकर प्रतीक्षा करने लगे। जनक ने सात दिन तक शुकदेव की उपेक्षा की। उसने शुकदेव को अपने पास बातचीत के लिये नहीं बुलाया।

आखिर आठवें दिन राजा जनक ने शुकदेव को अपने पास बुलाया, किन्तु वहाँ उनकी भेंट राजा से नहीं हुई। राजा जनक राजकीय व्यस्तता का नाटक करते रहे। तदंतर उन्हें अंत:पुर में बुलाया गया। वहाँ जनक तो शुकदेव के सामने नहीं आए, किन्तु बहुत-सी सुंदर युवतियाँ नाना प्रकार के स्वादिष्ट भोजन तथा भोग-सामग्री के द्वारा शुकदेव जी का आदर-सत्कार करती रहीं, किन्तु शुकदेव जी का मन तनिक भी विचलित नहीं हुआ। वे किसी में भी आसक्त नहीं हुए। वे सबमें समभाव से निरासक्ति, निर्विकार मौन और प्रसन्नचित होकर निर्मल पूर्णचंद्र के समान स्थिर रहे।

राजा जनक समझ गए कि शुकदेव सिद्ध पुरुष हैं। उनके स्वभाव की परीक्षा कर लेने के बाद जनक ने शुकदेव मुनि से कहा-''मुनिवर! आपने अपने सांसारिक कार्यों को समाप्त कर दिया, आपको सारे मनोरथ प्राप्त हैं, ऐसी स्थिति में आपकी क्या अभिलाषा है? आप किस उद्देश्य से यहाँ आए हैं?

''राजन्! मैं आपको गुरु मानकर यह जानने के लिये आया हूँ कि यह सारा जगत्-प्रपंच कैसे उत्पन्न होता है और फिर किस प्रकार विलीन हो जाता है?'' शुकदेव ने पूछा।

जनक ने शुकदेव को वही बातें बता दीं, जो उनके पिता व्यास जी ने बताई थी। सुनकर शुकदेव ने जनक से निवेदन किया-''हे राजन्! आप ज्ञानियों में श्रेष्ठ हैं, किन्तु जो बातें आपने मुझे बताई हैं-उन्हें तो मैं बहुत पहले से जानता था। मेरे पिता ने भी लगभग ऐसी ही बातें बताई थी, जो आप बता रहे हैं। शास्त्रों में भी ऐसा ही लिखा मिलता है। मैं जानता हूँ कि मन के विकल्प से प्रपंच उत्पन्न होता है और इस विकल्प के नाश होने पर इसका भी नाश हो जाता है। यह संसार निश्चय ही प्रशंसा के योग्य है और पूरी तरह सराहनीय है। तब हे महाभाग, यह है क्या वस्तु? मुझे सत्य बताइए। जगत् के विषय में मेरा चित्त भ्रांति में फंसा हुआ है। आप मेरी भ्रांति को दूर कर मेरे चित्त को शान्त कीजिए।''

शुकदेव की बात सुनकर जनक ने कहा-''शुकदेव जी! मैं सारी बातें विस्तार से बताने का प्रयास करता हूँ, आप ध्यान से सुनें। वास्तव में तो दृश्य जगत् है ही नहीं। यह बात जान लेने पर मन दृश्य वस्तु से विरक्त हो जाएगा। यह ज्ञान जब भली-भाँति परिपक्व हो जाएगा, तब उससे निर्वाणरूपी परम शान्ति प्राप्त होगी। वासनाओं का संपूर्णतया त्याग ही श्रेष्ठ त्याग है, वही विशुद्ध अवस्था है और वही मोक्ष है। जो इस तत्त्व को जान लेते हैं, जीवन मुक्त कहलाते हैं। पदार्थ भावना की दृढ़ता ही बंधन है और पदार्थों के प्रति वासनाओं का नाश हो जाना ही मोक्ष है। तप-साधन आदि के बिना समभाव से ही जिसे जगत् के भोग अच्छे नहीं लगते, वह जीवन्मुक्त कहलाता है। जो व्यक्ति यथासमय होने वाले सुखों और दु:खों से अनासक्त है, जो न प्रसन्न होता है, न शोक करता है, वह जीवन्मुक्त है। हर्ष, उद्वेग, भय, क्रोध, काम और शोक की दृष्टि से जिसका अंत:करण अछूता रहता है, वह जीवन्मुक्त कहलाता है। जो अहंकारमयी वासना का सहज रूप से त्याग करके आत्मा में स्थिर रहता है, चित्त के अवलम्बन का त्याग करने वाला व्यक्ति जीवन्मुक्त कहलाता है। जिसकी दृष्टि सदा अंतर्मुखी रहती है, जिसको न किसी पदार्थ की आकांक्षा रहती है, और न जो अपेक्षा करता है, जो सभी स्थितियों में सोते के समान विचरण करता है, वह जीवन्मुक्त कहलाता है।''

इस प्रकार का उपदेश देकर जनक ने कुछ देर के लिए विराम लिया, तत्पश्चात् आगे इस प्रकार से कहा-''हे व्यास नंदन, जो व्यक्ति सदा आत्मा में लीन रहता है, जिसका मन पूर्ण और पवित्र है। परमश्रेष्ठ शान्त अवस्था को प्राप्त कर जो संसार में किसी वस्तु की इच्छा नहीं करता, जो किसी के प्रति आसक्ति न रखता हुआ, उदासीन होकर विचरता है, वह जीवन्मुक्त कहलाता है। राग, द्वेष, सुख, दु:ख, धर्म, अधर्म और फल की अपेक्षा न करके जो काम करता है, वह जीवन्मुक्त कहलाता है। जो अहंभाव को छोड़कर मान-अभिमान त्याग कर, उद्वेग और संकल्पहीन होकर कार्य करता है, वह जीवन्मुक्त कहलाता है। हे शुकदेव! यह भी सुनो, जिसने धर्म और अधर्म को जगत् के चिंतन को तथा सारी इच्छाओं को अंत:करण से त्याग दिया है, वह जीवन्मुक्त कहलाता है। जो किसी भी प्रकार के स्वाद का आनंद न लेता हुआ खाद्य पदार्थों को समान भाव से खाता है, बुढ़ापा, मृत्यु, राज्य, दरिद्रता आदि में जो समान भाव से रहता है, धर्म, अधर्म, सुख-दु:ख, जन्म-मरण की तनिक भी भावना हृदय में नहीं लाता, वह जीवन्मुक्त है। सारी इच्छाओं, सारी कामनाओं और

(शेष पृष्ठ 23 पर)

संत कवि महाराज साहब श्री चतुरसिंह जी बावजी

– डॉ. कमलसिंह बेमला

महाराज साहब श्री चतुरसिंह जी बावजी ने भगवान श्री रामचंद्र जी के पवित्र वंश में करजाली ठिकाने में जन्म लिया था। हिन्दूआ सूरज मेवाड़ नाथ महाराणाजी श्री फतहसिंहजी (कैलाशवासी) के बड़े भाई करजाली महाराज साहब श्री सूरतसिंह जी और रानी कृष्णा कुंवर के आप चौथे और सबसे छोटे पुत्र थे। आपका जन्म विक्रम संवत् 1936 माघ सुदी चौदस (9 फरवरी, 1880) के दिन हुआ था। महाराज साहब सूरतसिंह जी बड़े धर्मात्मा और भगवत भक्त थे। रात-दिन भजन-स्मरण में ही लीन रहते थे। इसी कारण से महाराज साहब चतुरसिंह जी के हृदय में भी जन्म से ही भक्ति-ज्ञान और वैराग्य के अंकुर फूटे थे। आपमें बचपन से विरक्ति की भावना भरी हुई थी। जैसे-जैसे अवस्था बढ़ती गई वैसे-वैसे यह भाव भी बढ़ते गए। आप घण्टों तक भगवान का ध्यान और मानसिक सेवा करते रहते थे। बीच-बीच में बृज और काशी में पधार कर वहाँ साधना में रत रहा करते थे। गृहस्थाश्रम में भी आप वीतराग सन्यासी और परम योगी की भांति जीवन यापन करते थे। वि.सं. 1964 (ई. 1908) को आपकी धर्मपत्नी छापोली ठिकाने की शेखावतजी का राज्यक्षमा की बीमारी से देहान्त हो गया और वैराग्य की बढ़ती हुई इस घड़ी में जैस वैराग्य की बेल में पानी मिला हो दिन-प्रतिदिन एकांतवास और सत्संग बढ़ता गया।

आपकी इच्छा योग के अभ्यास करने की थी, इसी कारण आप नर्मदा के किनारे प्रसिद्ध योगी श्री कमल भारती जी के पास पहुँचे। कमल भारती जी ने कहा कि-''तुमको इतना दूर भटकने की क्या जरूरत है? तुम्हारे मेवाड़ में ही बाठरड़ा रावत दलेलसिंह जी के छोटे भाई गुमानसिंह जी लक्ष्मणपुरा बहुत अच्छे योगी हैं, तुम उन्हीं के पास जाओ।'' महाराज साहब गुमानसिंह जी के पास आए। उनका दृढ़ वैराग्य और योग सीखने की तीव्र लालसा देखकर योगीवीर्य गुमानसिंह जी ने राजराजेश्वर योग का उपदेश दिया। एकान्त में रहकर आपने बड़े उत्साह के साथ इस साधन को किया।

आप संस्कृत के बहुत अच्छे विद्वान थे। वेदान्त, सांख्य, योग आदि दर्शनों और कठिन से कठिन ग्रंथों को आप बहुत अच्छी तरह समझ लेते थे। आप ब्रह्मसूत्र, शांकरभाष्य, रामानुजभाष्य, उपनिषद श्रीमद्भागवतगीता, भिन्न-भिन्न आचार्यों की भाष्य सहित टिकायें, योगवशिष्ठ, पंचदशी, आत्मपुराण, विचार सागर, श्रीमद्भागवत, महाभारत, रामायण आदि ग्रंथों का बहुत अच्छे से इन्होंने वाचन, मनन और निदिद्यासन किया था। बड़े-बड़े योगी भक्त और महात्मा की आपने सत्संगति की। आपके पवित्र जीवन के अन्तिम वर्ष शान्ति और योग का गंभीर विचार और मनन में ही व्यक्त हुए। आप बाद के दिनों में हवामंगरी, सुखेर और नऊवा गाँव में ही अधिकतर विराजते थे। संगेसरा के बाहर नऊवा गाँव आपको बहुत अच्छा लगता था। वहीं एक छोटी सी खानूं मंगरी के ऊपर आप कुटिया (बावजी की कोटरी अब चतुर साधना स्थल) बनाकर ध्यान और विश्राम किया करते थे। यहीं पर वि.सं. 1978 पौष सुदी तीज रविवार (ई. 1922) के दिन आपको आत्मसाक्षात्कार हुआ और उसी मौके पर आपने 'अलख पच्चीसी', 'तूहीं अष्टक' और 'अनुभव प्रकाश' लिखा।

परम सुखद बात यह है कि ठीक उसी समय हमारी भूपाल नोबल्स संस्थान की भी स्थापना महाराज

कुमार भूपालसिंह जी, बेदला राव श्री राजसिंह जी और रलावता ठाकुर अमानसिंह जी के अथक प्रयासों से हुई थी। भूपाल नोबल्स की स्थापना का बीज 1882 ईस्वी में स्वामी दयानन्द सरस्वती के उदयपुर आगमन के वक्त ही पड़ गया था, उन्होंने तत्कालीन प्रजावत्सल और ज्ञानी महाराणा साहब श्री सज्जनसिंहजी को उदयपुर में शिक्षा के आलोक को प्रज्वलित करने के लिये प्रोत्साहित किया, परोपकारिणी सभा की 1883 ई. में स्थापना की। स्वधर्म, स्वराज्य, स्वदेशी और स्वभाषा पर जोर दिया। स्वतंत्र विचारों के लिये पृष्ठभूमि तैयार हुई और शिक्षा प्रसार के लिये सराहनीय कार्य हुआ, महाराणा प्रजा की शिक्षा प्रसार के लिये सहर्ष राजी हो गये पर उनके असामयिक देवलोक से यह घटना करीब 40 वर्ष आगे चली गई। भूपाल नोबल्स की स्थापना के बाद बावजी का स्कूल में पधारना होता था और संस्था में स्थित 'दाई जी का दरीखाना' में वे अक्सर सत्संग और ध्यान करवाते थे।

बावजी सदा संतुष्ट और परम प्रसन्न रहते थे, घमण्ड का तो मानो लेशमात्र का भी नामोनिशान नहीं था। आपकी रहनी बहुत साधारण थी। शरीर पर सूती और रेजे का कुर्ता और बुगलबंदी पहना करते थे, और माथे पर रेजे का फेंटा धारण किया करते थे। सर्दियों के दिनों में भी औढ़ने के लिये रेजे का चादर ही आप इस्तेमाल करते थे। आत्म साक्षात्कार हो जाने के बाद भी भिन्न-भिन्न मार्गों से परमात्मा की प्राप्ति कैसे हो उसकी परीक्षा के लिये अन्य साधनों का भी वे अभ्यास करते रहते थे। आपने जैन शास्त्रों का भी बहुत मनन किया और उनके अंदर लिखे अनुसार अभ्यास किया। कश्मीर शैव सिद्धान्त के ग्रंथ मंगवाए पढ़कर उनके ऊपर विचार मनन किया और उनमें जो विधियाँ बताई हुई थी वो साधन किये। इसी तरह से उन्होंने कुरान शरीफ और बाइबिल (नई और पुरानी टेस्टामेंट) दोनों ही तरह की विचार पूर्वक पढ़ी जिससे धर्मों का यथार्थ तत्त्व आपकी समझ में आ गया और इस मत पर पहुँचे कि सभी धर्मों का यथार्थ एक है, सभी एक मत हैं, रास्ते अलग-अलग हैं। आप फरमाया करते थे कि अब कुछ करने की जरूरत तो नहीं पर खाली बैठे रहने से तो ये मनोविनोद करें तो क्या हर्ज है। वि.सं. 1986 में आपके सोजिश की तकलीफ हुई। योग-सूत्र ग्रन्थ आपको बहुत प्रिय था और इस तकलीफ के वक्त में भी आप सरलता से योग के रहस्य को समझने वाली टीका लिखने का प्रारम्भ किया और आप खुद अपने हाथ से उसे लिखते रहे। कमजोरी इतनी हो गई थी कि आप बैठ नहीं सकते थे पर टीका बराबर लिखते रहे और जिस दिन निर्वाण हुआ उसके भी दो-तीन दिन पहले तक उन्होंने यह काम जारी रखा। आखिर वि.सं. 1986 आषाढ़ बदी नवमी (जुलाई, 1929) के दिन सुबह नौ बजे आप ध्यानावस्थित दशा में असार संसार को छोड़ योगियों की गति को प्राप्त हुए। खानुमंगरी, नऊआ में उस जगह बावजी की संगमरमर की आदमकद प्रतिमा लगी हुई है, जहाँ प्रतिवर्ष अप्रेल में तीन दिवसीय मेले का आयोजन किया जाता है।

साधना के शिखर पुरुष, मंगलमूर्ति बावजी चतुरसिंह जी तो भारतीय संत परम्परा के एक ओजस्वी, तेजस्वी और वर्चस्वी संत रत्न थे और थे सिद्ध जपयोगी, ज्ञानयोगी, ध्यानयोगी महापुरुष जिनका अद्‌भुत व्यक्तित्व व कृतित्व जन-जन के लिये प्रेरणा का पावन प्रतिष्ठान है। बावजी स्वाध्याय, साधना और सृजन में ही सदा लीन रहते थे। उनकी रचनाएँ आध्यात्मिक ज्ञान और लोक व्यवहार का संतुलित मिश्रण है। हमारे दिन-प्रतिदिन की घटनाओं के माध्यम से सरल भाषा पर भावों में गंभीरता के साथ उन्होंने सबसे कठिन ज्ञान को ऐसे तरीके से समझाया है जो आसानी से समझ में आता है और मामला हमारे दिलोदिमाग को छूता है। उनका साहित्य सहविचारों का अक्षयकोष है और उसमें जड़ शब्दों का नहीं अपितु

जीवन का बोलता भाष्य है जो जीवनोत्थान की मंगलमयी पावन प्रेरणा प्रदान करता है। आप भक्ति चेतना के अमृत पुंज, मेवाड़ दीप्त अस्मिता के प्रतीक पुरुष तथा मानवीय मूल्यों के उद्घोषक थे।

संत कवि महाराज चतुरसिंह जी बावजी ने 18 ग्रंथों को अपनी मातृभाषा मेवाड़ी के शब्दों से शृंगारित कर मेवाड़ को अमूल्य सौगात दी, जो उनके स्वर्ण हस्ताक्षर के रूप में संग्रहित हैं।

बावजी की कृतियाँ: चतुर प्रकाश, हनुमत्पंचक, अंबिकाष्ठक, शेष चरित्र, चतुर चिंतामणि: दोहावली/पदावली, समान बत्तीसी, शिव महिम्न: स्तोत्र, चंद्रशेखर स्तोत्र, श्री गीता जी, तुहीं अष्टक, परमार्थ विचार: सात भाग, अनुभव प्रकाश, हृदय रहस्य, अलख पच्चीसी, बालकां री वार, बालकां री पोथी, लेख संग्रह, सांख्य कारिका, तत्व समास, श्रीमानवमित्ररामचरित्र और योग सूत्र थी। मेवाड़ में लोकप्रचलित दोहों के माध्यम से जनमानस की सोई और शिथिल पड़ी आत्मा को जगाने का श्रेय अगर किसी संत को जाता है तो वो है बावजी चतुरसिंहजी। 'पर घर पग नी मैलणो, बिना मान मनवार। अंजन आवै देखनै, सिंगल रो सतकार' सरीखे दोहे एक शताब्दी के बाद भी अमिट छाप छोड़े हुए हैं। रेल, फोनोग्राम, रेहट, चरकी, रेलवे स्टेशन, हवाई जहाज को प्रतीक मानकर बावजी ने जो लिखा वो मेवाड़ी ही नहीं पूरे राजस्थान की मिट्टी का पर्याय बन गए। बावजी राजसी कुल से थे लेकिन उनकी सादगी के सभी लोग कायल थे। संत बनकर भले ही घर से निकल गए हो लेकिन संत कबीर की तरह पाखंड, आडम्बरों की जकड़ से कोसों दूर रहे। उनकी वाणी में भक्ति, प्रेम, वैराग्य का मधुर रसायन था। विलक्षण प्रतिभा के धनी बावजी एक विरले संत, कवि, लेखक, समाज सुधारक और मेवाड़ी मार्तण्ड के रूप में आज भी जगत विख्यात हैं। प्रबुद्ध व्यक्तित्व महाराज साहब को मेवाड़ की राज-रीति, धर्म मर्यादा, लोकाचरण, वर्ण व्यवस्था, सामाजिक रीति-रिवाज, मेवाड़ी वेशभूषा तथा सर्वोपरि मेवाड़ी बोली से अटूट स्नेह था। इसी मेवाड़ी बोली को जो उनकी लेखनी का प्रश्रय प्राप्त कर भाषा के गौरवपूर्ण पद पर आसीन हो चुकी है-उन्होंने अपनी अभिव्यंजना का माध्यम बनाया और इसी में अपनी संपूर्ण रचनाएँ लिखी जो अपने आप में वैराग्य, देश प्रेम तथा भाषानुराग की अनुपम त्रिवेणी है। दैनिक सहायता और संगति के लिये, बावजी ने कीका डांगी, रूपा, कान्ना, देवला, उदा, शंकर, काका और अपने समाज सुधारवादी विचारों के प्रसार के लिये उन्हें संबंधित कई कविताएँ लिखीं। उनके बनाये सरल और मानवीय मूल्यों से ओतप्रोत दोहे और भजन जन-जन में प्रसिद्ध हैं, जिनका ठेठ माधुर्य व मिठास संपूर्ण कृतियों में झलकता है और छलकता है, जो आज भी सुने जाते हैं। मेवाड़ की प्रसिद्ध संत महात्मा भूरी बाई भी आपकी शिष्या थी।

●

आशा एक नदी है जिसमें मनोरथ रूपी जल है, तृष्णा रूपी तरंगें उठ रही हैं, राग रूपी ग्राह है, वितर्क रूपी पक्षी है। यह नदी धैर्यरूपी वृक्ष को उखाड़ फेंकने वाली है। इसमें अज्ञान रूपी भंवर हैं, जिनके पार जाना कठिन है और जो अतिगहन हैं। इसके चिन्ता रूपी तट बहुत ऊँचे हैं। उसके पार जाकर विशुद्ध मन वाले योगीराज ही आनन्दित होते हैं।

– भर्तृहरि: वैराग्यशतक

गतांक से आगे

महान क्रान्तिकारी राव गोपालसिंह खरवा

– भँवरसिंह मांडासी

बन्दी बनाने का प्रयास :

राव गोपालसिंह 1915 ई. की 29 जून से 10 जुलाई तक 10 दिन टॉडगढ़ नजरबन्द रहे। उन दस दिनों में जिले के अंग्रेज अधिकारी चैन की साँस नहीं ले सके। उनके टॉडगढ़ की नजरबन्दी से फरार हो जाने के पश्चात तो वे और भी अधिक परेशान और चिन्तित हो उठे। उदयपुर और जोधपुर में नियुक्त अंग्रेज रेजिडेन्टों को सूचित किया गया कि वे उक्त दोनों स्टेटों के महाराजाओं पर दबाव डालकर उनके राज्यों में खरवा ठाकुर को शरण न देने एवं उसे बन्दी बनाने के कार्य में सहायता देने के लिये आज्ञा-पत्र प्रसारित करें। उदयपुर व जोधपुर के रेजिडेन्टों को दिए गए एक्सप्रेस टेलीग्राम की नकल–

"The Thakur Karwa, who was interned under defence of India act at Tadgarh has obsconded in company with one follower, are armed and mounted. Kindly request the Durbar to arrest them if found is state."

अजमेर-मेरवाड़े का कमिश्नर ए.टी. होम अजमेर छोड़कर ब्यावर में कैम्प डाले पड़ा था। पुलिस सुपरिन्टेण्डेन्ट होलिन्स टॉडगढ़ पहुँच चुका था। 12.7.15 को उसने ब्यावर के पते पर कमिश्नर को टेलीग्राम किया–''ठाकुर खरवा का अभी कुछ भी पता नहीं चला है। खरवा शस्त्रागार के तमाम हथियार एवं खजाने में रक्षित जवाहरात जब्त कर लिए जावें। पागे जो देहली मेल से आने वाले हैं, उन्हें ब्यावर ही रोको।''

टॉडगढ़ के समीपस्थ ग्राम बरार के पीथा पटेल ने रिपोर्ट की है कि उसने ठाकुर साहब को ताल और लसानी के बीच 'ईसरमन्द' की ओर जाते देखा है। (ईसरमन्द मेवाड़ के देवगढ़-मदारिया ठिकाने का एक गाँव है।) इस पर कमिश्नर अजमेर ने मेवाड़ के रेजिडेण्ट को टेलीग्राम से सूचित किया।

15.7.1915 को उदयपुर के रेजिडेण्ट ले. कर्नल केने ने कमिश्नर अजमेर को पत्र लिखकर सूचित किया–"Sir with reference to your telegram dated 12th July, 1915 and previous communications on the subject of arrangements for tracing and arresting the Thakur Sahib of Kharwa. I have the honour to inform you that the Mewar Darbar have issued order to all district officials and the Sardar's of Mewar to keep a carefull watch for the fugitive, who if traced is to be arrested and carefuly guarded.

उदयपुर स्थित अंग्रेज रेजिडेण्ट के आग्रह पर महाराणा फतेहसिंह ने अपने समस्त जिलाधिकारियों और ठिकानेदारों के नाम खरवा रावजी को शरण न देने और उन्हें बन्दी बनाने में सरकार की सहायता करने का आदेश प्रसारित कर दिया। परन्तु मेवाड़ की भूमि जो अतीत काल से ही सम्राटों के अपराधियों और विद्रोहियों की शरण-स्थली रही है, राव गोपालसिंह जैसे अंग्रेज सत्ता के विद्रोही वीर योद्धा को बांह पसार कर शरण देने हेतु आतुर बनी हुई थी। राजस्थान के देशी राज्यों की अपेक्षा मेवाड़ राज्य की जनता में देशभक्ति और अंग्रेज विरोधी भावना का प्रचार-प्रसार उस समय से पूर्व ही हो चुका था। सन् 1903 ई. में दिल्ली में आयोजित राज-दरबार में उपस्थित न होने के कारण महाराणा फतेहसिंह को जो असाधारण ख्याति और ऐतिहासिक महत्त्व मिला, उसके मूल में बारहठ केशरीसिंह और राव गोपालसिंह

की ही प्रेरणा थी। गर्वोन्नत मस्तक मेवाड़ की जागरूक जनता भी बारहठ केशरीसिंह और राव गोपालसिंह के देश की स्वाधीनता हेतु किए गए अंग्रेज विरोधी साहसपूर्ण कार्यों से प्रभावित भी थे-खरवा रावजी के प्रति श्रद्धा और सहानुभूति से भरे हुए थे। करजाली के महाराज योगीराज चतुरसिंह, जो महाराणा के समीपस्थ बांधवों में से थे, राव गोपालसिंह के मित्र और प्रशंसक थे। महाराणा स्वयं भी जो राव गोपालसिंह का सम्मान करते और कृपा बनाये रखते थे, मन से यही चाहते थे कि खरवा रावजी अपने विपत्ति-काल में मेवाड़ में कहीं भी बन्दी न बनाए जावें। यही कारण था कि शस्त्र-सज्जित अश्वारोही कई दिनों तक मेवाड़ पुलिस की आँखों के नीचे मेवाड़ के पर्वतीय व मैदानी क्षेत्रों में बिना किसी विघ्न बाधा के विचरण करते हुए मार्ग तय करते रहे। राव गोपालसिंह की राजपूती शौर्य से मण्डित तेजस्वी मुखाकृति एवं अश्वारूढ़ शस्त्र-सज्जित मुद्रा और वेशभूषा क्या किसी भी दर्शक का ध्यान आकर्षित किए बिना रह सकती थी? कुछ भी हो, उनकी गिरफ्तारी हेतु दौड़-धूप कर रहे राज्य के पुलिस अधिकारियों की सूचना रिपोर्ट तो यही थी कि ''खरवा ठाकुर का कहीं भी पता नहीं लग रहा है।''

इसी बीच सवाईसिंह ततारपुरा भी अपना कार्य पूर्ण कर राव गोपालसिंह के साथ आ मिला, इसकी सूचना सम्भवतया मेवाड़ पुलिस को मिल चुकी थी, लेकिन उच्चाधिकारियों से बात को छिपाये रखा। मेवाड़ के रेजिडेण्ट की निम्न सूचना में सवाईसिंह का नाम आना इसका प्रमाण है।

मेवाड़ के रेजिडेण्ट ने 23 जुलाई, 15 को कमिश्नर अजमेर को सूचित किया-''गिराही हाकिम (पुलिस अधिकारी) मानसिंह ने आमेट, पालका, अमरावास, झेटवाड़ा और दूसरे अनेक गाँवों में बड़ी सरगरमी से तलाशी कार्य किया है, परन्तु ठाकुर खरवा और उनके दो साथियों मोड़सिंह और सवाईसिंह का कहीं भी अता-पता नहीं लगा है।''

पिपलाज (अजमेर) का निवासी सुखजी दरोगा पहले राव गोपालसिंह के पास रहता था। उन दिनों वह पिपलाज गया हुआ था। राव गोपालसिंह के टॉडगढ़ से फरार होने से पूर्व ही उनके निर्देश पर सवाईसिंह मेड़तिया टॉडगढ़ से अन्य लोगों के साथ निकल गया था। वह पिपलाज गया और सुखजी के सहयोग से अच्छी नस्ल का एक ऊँट खरीदकर सुखजी के पास ही छोड़ दिया और वह स्वयं पूर्व निश्चित स्थान पर आगे चला गया।

मेवाड़ प्रदेश को निर्विघ्न पार करके दोनों फरार अश्वारोही खारी नदी के तट के किसी निर्जन स्थान पर पहुँचे। वहाँ से पिपलाज जाकर मोड़सिंह ऊँट ले आये। ऊँट पर सवार होकर उन्होंने घोड़ों को वहीं छोड़ दिया। आदत के अनुसार घोड़ों ने खरवा का मार्ग देखा परन्तु मार्ग में दोनों घोड़े पकड़ लिए गए। ऊँट की सवारी कर लेने के पश्चात उनकी पहचान हेतु पुलिस द्वारा प्रचारित एवं पहचान-चिह्न समाप्त हो गया। परन्तु फिर भी सावधानी की बड़ी जरूरत थी।

मेवाड़ से निकलकर जयपुर और टोंक राज्यों के गाँवों में होते हुए वे किशनगढ़ राज्य में चले गये। किशनगढ़ राज्य की पश्चिमोत्तर सीमा जोधपुर राज्य के परबतसर परगने से मिलती है। परबतसर परगने का ''रोहण्डी'' कस्बा किशनगढ़ राज्य की सीमा से लगता है। रोहण्डी सुरताणोत मेड़तियों का एक प्रतिष्ठित ठिकाना था। वहाँ के ठाकुर राव गोपालसिंह के अभिन्न मित्र और विपत्तकाल में साथ देने वाले साथी थे। उसी परगने में स्थित बडू-बूड़सू, बोरावड़, जावला, भखरी आदि ठिकानों के मेड़तिया ठाकुर, राव गोपालसिंह के मित्रों एवं समर्थकों में अग्रगण्य थे। सीटावट, गुढ़ा, भैरूंदा आदि गाँव खरवा के भाई बांधव सगतसिंहोत, जोधों के

जागीरी के अभिन्न सहयोगी सवाईसिंह और बख्तावरसिंह के गाँव क्रमश: ततारपुरा और मालावास भी इस स्थान के नजदीक थे। परबतसर परगने के उन गाँवों के निवासी वे सभी जोधा और मेड़तिया राठौड़ आपत्ति आने के समय राव गोपालसिंह के सहायक सिद्ध हो सकते थे। राव गोपालसिंह के वहाँ पहुँचने से पूर्व ही सवाईसिंह ततारपुर ने रोहण्डी ठाकुर से मिलकर उनके भूमिगत रहने के स्थान का प्रबन्ध कर लिया था। रोहण्डी के जंगल और पहाड़ों के बीच ठिकाने की रक्षित शिकारगाह थी, जिसे ''रोहण्डी का माला'' कहते थे। वहाँ शिकार के लिए जाने पर विश्राम हेतु दो-चार मकान बने हुए थे। फरार घोषित राव गोपालसिंह को मोड़सिंह के साथ वहीं ठहराया गया था। सवाईसिंह और बख्तावरसिंह वहाँ पर हरदम बने रहते थे। राव गोपालसिंह वहीं रहने और पहाड़ियों में भ्रमण करते।

अंग्रेजों का खुफिया विभाग मेवाड़ के पहाड़ी प्रदेश और मेरवाड़ा के दुर्गम स्थानों में राव गोपालसिंह को ढूँढने में व्यस्त था। मारवाड़ के इस भाग में उनके पहुँच जाने और यहाँ पर छिपे होने की उन्हें आशंका तक नहीं थी।

(क्रमशः)

पृष्ठ 17 का शेष

राजा जनक ने दिया शुकदेव को उपदेश

सारे निश्चयों का जिसने मन से त्याग कर दिया है, जन्म, स्थिति, विनाश, उन्नति और अवनति में जिसका मन सदा एक समान रहता है, जो आत्मा में ही पूर्णता का अनुभव करता है, वह जीवन्मुक्त कहलाता है, शरीर का नाश हो जाने पर ऐसा व्यक्ति जीवन्मुक्त अवस्था को छोड़कर गतिहीन वायु के समान विदेह मुक्त अवस्था को प्राप्त होता है। विदेह मुक्त अवस्था में जीव की न तो उन्नति होती है और न अवनति और न उसका क्षय होता है। यह अवस्था सत् है, न असत्। इसमें न तो 'मैं' का भाव है, न ही 'पराया' भाव। विदेहमुक्ति वास्तव में गंभीर तथा स्तब्ध अवस्था है। उसमें न तेज व्याप्त है, न दर्शन। उसमें भूत और पदार्थों के समूह नहीं होते, केवल अनंत रूप में सत् ही स्थित होता है। वह ऐसा अद्‌भुत तत्त्व है, जिसे किसी भी प्रकार के शब्दों द्वारा नहीं बताया जा सकता। वह पूर्ण से पूर्णतर और पूर्णतर से पूर्णतम है। वह अनंत और चेतना मात्र होता है। दृष्टा, दृश्य और दर्शन वही है। इसके अतिरिक्त और कुछ जानने के लिये नहीं है।''

इतना कहकर जनक ने शुकदेव के मुख की ओर देखा और फिर मुस्कराते हुए कहने लगे-''हे व्यास नंदन! आपने इस तत्त्व को स्वयं भी जान लिया है और अपने पिता से भी सुना है कि जीवन अपने संकल्प से ही बंधन में पड़ता है और संकल्पहीन होने पर मुक्त हो जाता है। आपने स्वयं उस तत्त्व को जान लिया है, जिसे जान लेने पर इस संसार में महात्माओं को समस्त दृश्यों से अथवा भोगों से विरक्ति हो जाती है। आप मुक्त हो, अत: भ्रांति को छोड़ दें। आप बाहर और अंत:करण में तथा उसके भी भीतर देखते हुए नहीं देखते, आप पूर्ण मुक्तावस्था में साक्षी-भर रहते हो।'

राजा जनक के दिए गए इस लम्बे उपदेश को सुनकर शुकदेव जी की भ्रांति मिट गई और वे परम शक्ति का अनुभव करते हुए सुमेरु पर्वत की ओर चल पड़े, जहाँ उन्हें अब अखण्ड समाधि लगानी थी।

(महोपनिषद् से)

क्रान्ति का महान नायक राजा देवीबक्षसिंह बिसेन

– गोपालसिंह

इस देश के कोने-कोने में ऐसे वीर पैदा हुए हैं जिनकी वीरता और शौर्यतापूर्ण कार्यों ने उस क्षेत्र, उस वंश और उस भूमि को गौरवान्वित किया है, दुर्भाग्य उनका नहीं कि उनके उच्च कोटि के बलिदान और त्याग तक हम नहीं पहुँच सके बल्कि दुर्भाग्य हमारा रहा कि हमें और हमारी संतानों को उनके स्वर्णिम कार्यों की जानकारी नहीं हो सकी और हम उनसे प्रेरणा नहीं ले सके। कभी वक्त बेवक्त उन्हें याद कर अपने आपको गौरवान्वित महसूस नहीं कर सके। उन्हें फूल अर्पण कर उनकी तस्वीर को अगरबत्ती का धुआं नहीं दिखा सके, न उनके कार्य हमें रोमांचित कर सके और न उनसे प्रेरित होकर हमारे कुछ लोग आगे बढ़ सके।

जब हमें और हमारे बच्चों को अपने ही क्षेत्र के एक दो इतिहास पुरुषों को छोड़कर छोटे-मोटे नायकों की जानकारी नहीं है तो दूसरे क्षेत्र के महानायकों की जानकारी की क्या कल्पना कर सकते हैं, तो उसी प्रकार दूसरे क्षेत्र के लोग हमारे क्षेत्र के महानायकों के बारे में बहुत अच्छी तरह जानते होंगे, हमारा ऐसा सोचना हमारी भूल ही कही जाएगी। जब बिहार का कुंवरसिंह पंवार, उत्तरप्रदेश के छत्रसाल बुंदेला और बेणीमाधव सिंह बैंस जैसे इतिहास के प्रकाश स्तम्भों के बारे में गुजरात, राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र का राजपूत समाज बहुत कम जानकारी रखता है तो यह कैसे सोचा जा सकता है कि राजस्थान के प्रताप और दुर्गादास, मध्यप्रदेश के राजा रामशाह तौमर की उत्तरप्रदेश और बिहार के राजपूतों को पूरी-पूरी जानकारी होगी। राजपूतों की युवा पीढ़ी इन वीर पुरुषों से कुछ प्रेरणा लेती होगी।

इन्हीं वीरों की तरह का एक वीर योद्धा महान क्रान्तिकारी, क्रांतिदूत है, गोंडा (उत्तरप्रदेश) का महान नायक देवीबक्ष सिंह बिसेन। जिनके इतिहास के बिना क्रान्ति का इतिहास अधूरा रहेगा, जिसकी चर्चा के बिना स्वतंत्रता संग्राम की चर्चा अधूरी रह जाएगी। किन्तु इसे नियति की क्रूर मजाक कहें या हमारे सत्ताधीशों का स्वार्थ कि देवीबक्ष सिंह बिसेन जैसे क्रान्ति नायकों को आज इस देश की जनता तो दूर देश का राजपूत समाज तक नहीं जानता है। देवीबक्षसिंह जैसे सेना नायकों का इतिहास इसीलिए जन-जन को नहीं बताया गया कि जनता ऐसे नायकों के रोमांचित कार्यों को पढ़कर शायद वर्तमान नेताओं को विशेष महत्त्व नहीं देती। देश को आजादी दिलाने का सारा श्रेय जिस प्रकार कुछ नेताओं के खाते में डाल दिया गया है, तब शायद ऐसा नहीं होता?

अपनी बाल्यावस्था में ही देवीबक्ष ने अपने भविष्य की झलक दे दी थी। ''पूत के पाँव पालने में'' वाली कहावत को उन्होंने चरितार्थ कर दिया था। बारह तेरह वर्ष की उम्र में ही इनके शौर्य, साहस और सुंदरता की शोहरत बादशाह तक पहुँच चुकी थी, तब एक दिन बादशाह ने उन्हें दरबार में बुलाया और अपनी सनक में कहा कि ''देवीबक्ष मेरे पास तुम्हारी वीरता और साहस की परीक्षा की एक कसौटी है'' वह कसौटी वास्तव में कुछ और नहीं, एक दुर्दमनीय घोड़ा था जो अनेक नवयुवकों को अपनी पीठ पर चढ़ते ही फेंक देता था। कई युवक इस प्रयत्न में घायल हो चुके थे और कुछ मर भी गए थे। इसी घोड़े पर राजा देवीबक्ष को चढने के लिये कहा गया। देखते ही देखते बालक राजा घोड़े की नंगी पीठ पर केवल लगाम लगाकर चढ़ गया और घोड़े को तीर की तरह

भगाते हुए निकल गया। देवीबक्ष के घोड़े को लगाम लगाकर उसकी नंगी पीठ पर बैठकर उसे काबू करने का दृश्य ऊपर वाले जनानखाने से बेगम देख रही थी, उन्होंने इस बालक का सुंदर सुड़ौल रूप और वीरतपूर्ण आभा को देखा और इतना प्रभावित हुई कि देवीबक्ष को घोड़े से उतरते ही बुलवाया और ''बेटा'' कहा। बालक देवीबक्ष ने भी अपनी राजपूती परंपरा के अनुसार बेगम को ''माँ'' कहा और भरे दरबार में घोषणा की कि राजपूती परम्पराओं का निर्वाह करते हुए अपनी ''माँ'' के लिये बलिदान हो जाऊँगा किन्तु आपकी आन और अस्मत पर आँच नहीं आने दूंगा।'' और अपने इन्हीं शब्दों पर दृढ़ रहा, राजपूत नायक देवीबक्ष बिसेन। सन् 1857 में क्रान्ति के दौरान एक बार राजा घाघरा के इस पार कैंप कर रहे थे और दूसरी ओर अंग्रेज सेनापति पहुँचा उसने राजा देवीबक्ष से कहलवाया कि यदि बेगम का साथ छोड़ दे तो उनका राज्य जब्त नहीं किया जाएगा। देवीबक्ष ने अंग्रेज सेनापति के इस प्रस्ताव को ठुकराते हुए उत्तर दिया-''मैं एक राजपूत हूँ और इस शरीर के रहते मैं अपनी माता का साथ नहीं छोड़ सकता।'' धन्य है राजपूती संस्कृति और क्षत्रिय धर्म, राजा देवीबक्ष का यह कथन हमें मारवाड़ के अमरसिंह राठौड़ की याद ताजा कराता है जिसने अपने दोस्त की खातिर मारवाड़ का राज्य ठुकरा दिया, रणथम्भौर के हम्मीरदेव चौहान की याद दिलाता है, जिसने मोहम्मदशाह की खातिर अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया था। किन्तु दुर्भाग्य से आज राजपूत धीरे-धीरे अपनी संस्कृति और अपने धर्म को भूलते जा रहे हैं और यही कारण है कि पतन का रास्ता भी कदम दर कदम राजपूतों का साथ निभाता जा रहा है। कौन रोकेगा इस राह को, कौन मोड़ेगा इस रास्ते को, आप या आपकी आने वाली पीढ़ी? अभी तो इसका उत्तर भविष्य के लिये खुला छोड़ देते हैं।

गोंडा जिला और बस्ती जिला (उत्तरप्रदेश) की सीमा पर एक छोटी सी रियासत थी बांसी। एक बार देवीबक्ष का एक राज-भाट संयोगवश बांसी दरबार में गया, उसने बाएँ हाथ से राजा को प्रणाम किया। बांसी के राजा रुष्ट हो गए। भाट बोला कि राजन ''मेरा दाहिना हाथ केवल देवीबक्ष को सलाम करता है'' तब बांसी के राजा ने कहा कि देखना है कौन श्रेष्ठ है? और यह कहकर राजा ने भाट के दाहिने हाथ में चूडियां पहना दी। भाट ने आकर राजा देवीबक्ष को दिखाया। देवीबक्ष का तेज जाग उठा और उन्होंने बांसी पर चढ़ाई कर दी। उसे पराजित किया और उनके राजद्वार का फाटक उखाड़कर ले आये और अपने सिंह द्वार पर उसे लगाया। अब भी उस द्वार के भग्नावशेष देखे जा सकते हैं। इस खंडहर और महल पर इस समय धानीपुर के राजा का अधिकार है।

राजा देवीबक्ष वास्तव में एक महापुरुष थे, उनके लिये हिन्दू मुसलमान बराबर थे। उन्हें अंग्रेजों की सत्ता अखरती थी। भारतीयों की अवनति से उन्हें आंतरिक पीड़ा होती थी। उनके दरबार की यह परिपाटी थी कि मुहर्रम के अन्तिम दिन (अशरे के दिन) ताजिए कर्बला जाते हुए उनके सिंह द्वार पर आदर पाते थे। वहाँ रखे जाते थे। मुस्लिक इसे अपना गौरव मानते थे। वह प्रणाली और परिपाटी अब तक कायम है। आज तक मुस्लिम उस टूटे सिंहासन पर ताजिए टिकाते हैं। उस खंडहर सिंहद्वार की वंदना मुसलमान करते हैं। वहाँ इतना जल पुष्प चढ़ाते हैं कि कीचड़ हो जाता है।

राजा देवीबक्ष अपने बाल्यकाल से अपने निर्वाण तक सदा गतिशील रहे। जुबान के सच्चे और वचन के पक्के यह वीर प्रतापी पुरुष निःसंदेह पूजनीय है। अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह और आजीवन अंग्रेजों से संघर्ष एक ऐसा स्वर्णिम अध्याय है जिसे इतिहासकारों ने जनता के सामने न लाकर और उनकी वीरता व

(शेष पृष्ठ 29 पर)

क्रांतिकारी डूंगजी-जवारजी

– डॉ. मातुसिंह मानपुरा

मरुभौम (राजस्थान) वीर प्रसूता के नाम से विश्व विख्यात रही है। अभाव और संघर्ष यहाँ के निवासियों के जीवन साथी रहे हैं। चाहे अन्न-पानी की कमी रही हो लेकिन स्वाभिमान का सरोवर लबालब भरा रहा है। लोककथाओं और इतिहास का अध्ययन करने से ऐसा लगता है कि मरुभौम के उन मतवालों ने सांसारिक जीवन जीने के लिये नहीं अपितु सांसारिक जीवन में मर्यादापूर्ण मानदण्ड स्थापित करने के लिये जन्म लिया हो। गाँव-गाँव में निर्मित भोमिया, झुझारों के चबूतरे इस तथ्य के साक्षी हैं। गाय एवं असहाय की रक्षा करना तथा स्वामी-भक्ति के लिये सिर कटवाने की परम्परा यहाँ का सर्वमान्य सिद्धान्त रहा है। 16 से 80 वर्ष तक माचे (पलंग) की मौत न मरकर प्राणीमात्र के हितार्थ मरने के अवसर ढूंढ़ना ईश्वर भक्ति से भी अधिक प्रिय रहा है। यहाँ के जनसामान्य के द्वारा गाये जाने वाले होली के धमाल लोक गीत और कवियों की वाणी में इन सूरमाओं को अमर करने का प्रयास किया। वीर रस के कवि ने अपने कालजयी दोहे के द्वारा मनोभाव व्यक्त किये-

धर जातां धर्म पलटतां त्रिया पड़ंता ताव।
ऐ तीनों दिन मरण रा, कुण रंक कुण राव।।

आठवीं शताब्दी से ही भारत भूमि पर विदेशियों की कुदृष्टि तथा आक्रमण के उदाहरण हमने इतिहास के पृष्ठों में पढ़े हैं। संघर्ष में हार-जीत का खेल तो चलता रहा है, लेकिन विदेशों तक यह संदेश गया कि हम संघर्ष से पराजित होने वाले नहीं हैं। फिरंगियों ने भेष बदलकर व्यापारी के रूप में प्रवेश किया। समय ने पंख पसारे। यह व्यापारी फूट डालो और राज करो कार्यप्रणाली के द्वारा शासक बन बैठे। कुटिल व्यापारियों ने पिता-पुत्र, भाई-भाई, साला-बहनोई, ससुर-दामाद आदि रिश्तों में अपनों से अपनों को ही लड़ाया, लेकिन जनभावना के असंतोष को दबाया नहीं जा सका। असंतोष प्रगट होते रहे एवं मिटते रहे, लेकिन जगदम्बा स्तुति की ज्वाला से जो असंतोष भड़का वह सन् 1857 की क्रान्ति का आधार बना और उसका नेतृत्व किया, अतीत की गौरवपूर्ण मान्यताओं को आधार मानकर कदम बढाने वाले डूंगजी-जवारजी ने।

राजस्थान के पूर्वी क्षेत्र में स्थित एक बहुत बड़ा भू-भाग शेखावाटी के नाम से जाना पहचाना जाता है। 15वीं शताब्दी में सर्वधर्म एवं नारी सम्मान के रक्षक महाराव शेखा की इस कर्मस्थली में झुन्झुनू तथा सीकर के अतिरिक्त कुछ क्षेत्र चूरू जिले का भी माना जाता है। तत्कालीन समय के मरुस्थली मैदान से लेकर वर्तमान भारत के हिमाच्छादित मुकुट की रक्षा के लिये शेखावाटी के रणबांकुरों ने अपनी अमिट छाप को बनाये रखा। स्वाभिमान के साथ जीवन एवं मातृभूमि की रक्षा के लिये बलिदान होकर भावी पीढ़ी के लिए निष्कलंक धरोहर छोड़ना यहाँ की परम्परा रही है। धर्म, स्वतंत्रता एवं स्वाभिमान के लिये एक ही परिवार की तीन-तीन पीढियाँ एक साथ युद्ध मैदान में पहुँचने के उदाहरण है -

बाप पड़्यो जिण ठौड़ हूँ, बेटा नह हटियाह।
पेच कसूम्बल पाग रा, सिर साथै कटियाह।।

इतिहास तथ्यात्मक विवरण के साथ कटु घटनाओं का लेखा-जोखा भी प्रस्तुत करता है। सीकर के रावराजा शिवसिंह के तीन रानियों में चांपावतजी (चांपावत राठौड़ों की बेटी) भी एक रानी थी। रानी चांपावतजी को हाथ खर्च के लिये वर्तमान लक्ष्मणगढ़ तहसील के पाँच गाँव दे रखे थे। पाटोदा, बठोट,

चुड़ेली, सरवड़ी एवं दीपपुरा। उत्तराधिकार को लेकर राजा-रानी एवं परिवार के मध्य वैचारिक भिन्नता थी। इनके दोनों पुत्र कीर्तिसिंह एवं उम्मेदसिंह उत्तराधिकार के संघर्ष में धोखे से मारे गए। रानी ने इसके लिये शिवसिंह को दोषी मानकर विरोधस्वरूप सफेद कपड़े धारण कर लिए। अपने पाँच गाँवों में से कीर्तिसिंह के वंशजों को पाटोदा, बठोट व चुड़ेली तथा उम्मेदसिंह के वंशजों को सरवड़ी एवं दीपपुरा दिया गया।

कीर्तिसिंह के पुत्र पदमसिंह पाटोदा के ठाकुर बने। पाटोदा एवं बठोट के मध्य पाँच किलोमीटर का फासला है। पदमसिंह के पुत्र दलेल सिंह ने बठोट में नया ठिकाना स्थापित कर गढ़ का निर्माण करवाया तथा अपने तीन भाईयों बख्तावरसिंह, केशरीसिंह एवं उदयसिंह को तीन-तीन हजार बीघा कृषि भूमि देकर सम्मानजनक आर्थिक आधार प्रदान किया तथा अपने छोटे पुत्र जवाहरसिंह को पाटोदा का टिकाई (मुखिया) ठाकुर नियुक्त किया। बठोट ठाकुर दलेल सिंह के बड़े पुत्र विजयसिंह की कुंवर पद में मृत्यु होने के कारण दलेल सिंह के बाद भींवसिंह को बठोट का ठाकुर बनाया गया। भींवसिंह के बाद उनके पुत्र भोपाल सिंह बठोट के ठाकुर बने। बठोट, पाटोदा के संरक्षक एवं सहयोगी तीन हजार बीघा कृषि भूमि के स्वामी ठाकुर उदयसिंह के दो पुत्र हुए। डूंगरसिंह (डूंगजी) एवं रामनाथ सिंह।

डूंगजी युवावस्था से ही अंग्रेजों एवं उनसे संधि करने वाले राजा-महाराजाओं के विरुद्ध विचारधारा रखते थे। इसलिए डूंगजी को सार्वजनिक क्रियाकलापों के लिए समय-समय पर पाबंद किया जाता था। जयपुर महाराजा से हुए समझौते के अनुसार शेखावाटी क्षेत्र में शान्ति व्यवस्था कायम रखने के लिए शेखावाटी ब्रिगेड की स्थापना कर रखी थी। वास्तविकता यह थी कि शान्ति व्यवस्था के लिये नहीं अपितु अंग्रेजों के विरुद्ध विचारधारा को दबाने हेतु इसका उपयोग किया जाता था, तथा स्थानीय शासन में इस ब्रिगेड का अत्यधिक हस्तक्षेप रहता था। इसलिए ठिकानेदार अंग्रेजों द्वारा बनाये नियमों के अनुसार ही शासन प्रबंध रखते थे। क्रांतिकारी विचारधारा के प्रबल समर्थक डूंगजी अपने क्षेत्र के सभी ठिकानेदारों से सम्पर्क रखते थे तथा यदाकदा इनसे आर्थिक सहायता प्राप्त होती रहती थी, लेकिन खुले रूप से समर्थन करने वालों की संख्या अधिक नहीं थी। पाटोदा के टिकाई ठाकुर जवाहर सिंह रिश्ते में डूंगजी (डूंगरजी) के भाई लगते थे एवं समान विचारधारा होने के कारण सब से बड़े शुभचिन्तक थे। प्रारम्भ में अँग्रेजों को भ्रमित रखने के लिये जवारजी स्पष्ट रूप से डूंगजी के साथ दिखाई नहीं देते थे लेकिन विचार-विमर्श कर योजना बनाने के लिये इन दोनों भाईयों के मध्य घनिष्ठ आत्मीयता थी। डूंगजी के समर्थक एवं जवारजी के मुँहबोले भाई लोठजी जाट इन दोनों क्रांतिकारियों के अंधभक्त थे। रींगस निवासी बलिष्ठ शरीर के धनी लोठजी निठारवाल गोत्र के जाट थे, तथा बठोट में अपनी बुआ के पास रहते थे। सांवतजी एवं करणोजी मीणा इस टीम के सक्रिय सदस्य थे। अनेक गाँवों के सैकड़ों नवयुवक इनकी छापामार कार्यप्रणाली के ऊर्जावान सैनिक थे।

अंग्रेजों द्वारा संचालित शेखावाटी ब्रिगेड की कार्यप्रणाली से ठिकानेदारों के अतिरिक्त आम जनता का भी शोषण हो रहा था। इन दिनों डूंगजी-जवारजी एवं इनके साथी जनसामान्य में 'धाड़ेती' के नाम से लोकप्रिय थे। ऊर्जावान क्रान्तिकारियों ने अवसर देखकर शेखावाटी ब्रिगेड के कई ठिकानों पर धावा बोला एवं प्राप्त माल को अपने उपयोग के अतिरिक्त गरीब परिवारों में बाँट दिया तथा प्राप्त आधुनिक हथियारों से और अधिक हथियार व धन प्राप्त कर अपनी स्थिति को मजबूत किया। लोकचर्चा है कि अंग्रेजों को देश से निकालने के लिये ठिकानेदारों के

अतिरिक्त इन क्रान्तिकारियों ने आम जनता से मिलकर एक बड़ी कार्ययोजना तैयार की। इस योजना के अनुसार ज्यादा धन की आवश्यकता थी। कहा जाता है कि डूंगजी-जवारजी ने रामगढ़ के व्यापारियों से धन उधार देने के लिये कहा लेकिन उन्होंने यह कहते हुए इन्कार कर दिया कि आप तो धाड़ेती हैं, आज यहाँ तो कल और कहीं चले जाओगे। हमारा धन चला जायेगा तथा अंग्रेजों द्वारा दण्डात्मक कार्यवाही भी की जायेगी। अंग्रेजों द्वारा संरक्षित अजमेर से रामगढ़ आने वाले व्यापारियों की बाळद (बैलों पर लदा हुआ कीमती सामान) पर्वतसर के पास डूंगजी-जवारजी द्वारा लूट लिया गया। सोना-चांदी एवं नकद रुपयों को पुष्कर ले जाकर सीढियों का पुनर्निर्माण करवाया एवं पुजारियों को पर्याप्त धन भेंट किया तथा दैनिक आवश्यकता की सामग्री सामान्यजन में वितरित की गई। अंग्रेजी अखबारों ने इसे 'रॉबिनहुड' का नाम देकर प्रकाशित किया तथा मानवीय दृष्टिकोण की समीक्षात्मक टिप्पणी में इसकी सराहना की। मध्यम स्तर के ठिकानेदारों से लेकर देशप्रेमी सामान्य जनता तक इस प्रकार के क्रियाकलापों एवं प्रचारित-प्रसारित समाचारों से प्रसन्न थी, लेकिन अंग्रेजों के लिये यह करारा तमाचा था। जयपुर एवं जोधपुर व बीकानेर शासकों तथा सीकर के राव राजा को सख्त भाषा में इन क्रान्तिकारियों को गिरफ्तार करने के आदेश दिये गये। अंग्रेज एवं समर्थित सेना ने अपनी कार्यवाही तेज कर दी। क्रान्तिकारियों के हमले बुलन्द थे। अँग्रेजी सेना के नीमच कैम्प से भी हथियार लूट लिए गये। इस अप्रत्याशित घटना से अंग्रेज अधिकारियों को बड़ा सदमा पहुँचा। अँग्रेजी सेना इन उत्साही स्वतंत्रता प्रेमियों का कुछ नहीं बिगाड़ सकी। स्थानीय शासकों के सहयोग से अँग्रेज अधिकारियों ने इन्हें पकड़ने के लिये क्षेत्र के अनुसार सेना के कई उड़नदस्तों का गठन किया तथा सम्भावित स्थानों पर अचानक छापे मारे गये। सेना के बढ़ते दबाव के कारण क्रान्तिकारियों ने भूमिगत होना उचित समझा।

डूंगजी-जवारजी एवं लोठजी निठारवाल तथा अंग्रेजों द्वारा गिरफ्तारी के लिये वांछित सभी देश प्रेमियों ने सुविधानुसार अपने मित्र व पारिवारिक रिश्तेदारों के यहाँ गुप्त रूप से रहने का निर्णय किया। जवारजी पाटोदा के मुखिया ठाकुर थे। सब सुविधाएँ थीं, लेकिन देश प्रेम व डूंगजी का साथ निभाने के लिये सीकर क्षेत्र छोड़कर बीकानेर की तरफ रेगिस्तान क्षेत्र में गुप्तरूप से रहने लगे। डूंगजी ने अजमेर जिले के झड़वास गाँव में स्थित अपनी ससुराल में सुविधापूर्वक समय व्यतीत करने की व्यवस्था कर ली। क्रांतिकारियों द्वारा की गई घटनाएँ अंग्रेजों को काँटे की तरह चुभ रही थी। गुप्तचर व छापामार टीमों का गठन कर क्रांतिकारियों का पीछा किया गया, लेकिन इनकी लोकप्रियता के कारण जनसामान्य जानकारी न देकर सुरक्षित रखने का प्रयास करता था। अंग्रेजों का ध्यान दल के नेता डूंगजी पर अधिक था। इसलिए इनके ससुराल के आसपास गुप्तचर भेजे गये। झड़वास के गौड़ों (गौड़ राजपूत) ने महीनों तक इनकी सफल सुरक्षा की लेकिन डूंगजी के साला भैरूसिंह के निवास स्थान पर खुशी में आयोजित शराब की महफिल में डूंगजी सार्वजनिक रूप से शामिल हो गये। रिश्तेदारों की मनुहारों से शराब का नशा अधिक हो गया। पार्टी कार्यक्रम खुला होने के कारण अंग्रेजों के गुप्तचरों को सूचना मिल गई। रात के समय नशे में सोये हुए डूंगजी को अंग्रेज सैनिकों ने गिरफ्तार कर लिया। लोक-चर्चाओं में यह भी कहा जाता है कि डूंगजी के साले ने अंग्रेजों से मिले लालच के कारण अपने बहनोई को गिरफ्तार करवाया था। सत्य जो भी है, लेकिन डूंगजी सुरक्षित जगह समझकर ससुराल में आये थे। इसलिए ऐसी स्थिति में उन्हें सुरक्षित स्थान पर पहुँचाने की जिम्मेदारी झड़वासा वालों की थी। मरुभौम के इस

स्वतंत्रता सेनानी से विशेष खतरा होने के कारण अंग्रेजों ने आगरा किले को मजबूत जेल में हथकड़ियों सहित कैद कर लिया। जुझारू नेतृत्व के बिना क्रान्तिकारियों का दल निष्क्रिय अवश्य हो गया लेकिन परास्त नहीं हुआ था। अंग्रेजों की तरफ से दबाव कम होने के कारण स्वाभिमानी क्रान्तिकारी अपने सीमित दैनिक कार्य करने लगे थे। जन्म-मरण, वार-त्योहारों के अवसरों पर रिश्तेदारों व अन्य लोगों से भी मिलने लगे थे। बहुत समय बाद होली के त्योहार पर सभी साथी पाटोदा में इकट्ठे हुए और होली की रामां-शामां करने के लिये डूंगजी की हवेली पर भी गये। पद एवं मर्यादा के अनुसार झरोखे में खड़ी डूंगजी की धर्मपत्नी ने रामां-शामां को स्वीकार कर घर आये शुभचिन्तकों को ओळमा (उपालम्भ) तो नहीं दिया लेकिन बातों ही बातों में पूछा कि आपके घर परिवार के सदस्य सकुशल हैं? सबने होली का त्योहार अच्छी तरह से मनाया। कुशलतापूर्वक होली का त्योहार मनाने के ये शब्द क्रान्तिकारियों को चुभ गये। जवारजी के गढ में आकर विचार-विमर्श हुआ तथा निर्णय लिया गया कि सब से पहले हमें आगरा किले की जेल की समस्त जानकारी करनी चाहिए। जवारजी ने यह कार्य लोठजी जाट को सौंपा, जिन्होंने इसे सहर्ष स्वीकार किया।

(क्रमशः)

पृष्ठ 17 का शेष

क्रान्ति का महान नायक राजा देवीबक्षसिंह बिसेन

संघर्ष को अंधेरे में रखकर नयी पीढ़ी का बड़ा अहित किया है। गठीले शरीर और विशाल व्यक्तित्व के धनी इस इतिहास पुरुष का बल अतुलनीय था। ऐसा कहते हैं कि चाँदी का रुपया अंगूठे और अंगुली में दबाकर मोड़ देते थे। यह सेनानायक चतुर घुड़सवार और मल्लयुद्ध में अद्वितीय थे। गोंडा, बस्सी और अवध के लोग उन्हें अजानबाहु कहा करते थे।

एक ओर अनवरत युद्ध करने और वृद्धावस्था के कारण, दूसरी ओर अंग्रेजों की बढ़ती सख्ती के कारण राजा देवीबक्ष ने नेपाल की ओर कूच कर दिया, और फिर जीते जी भारत माँ का यह लाडला सपूत पुनः भारत नहीं आ सका।

भारत के इतिहास का यही तो एक बहुत बड़ा अजूबा है कि यहाँ छोटे कार्यों को भी प्रचार द्वारा बहुत ज्यादा बता दिया जाता है और बहुत बड़े कार्यों को गौण बना दिया जाता है। राजा देवीबक्ष जैसे इतिहास पुरुष की जीवनियाँ यदि बालकों को, विद्यार्थियों को पढ़ने को दी जाती तो निश्चित ही देश में आज जो स्वार्थ और मतलब परस्ती की भावना पनपती चली जा रही है, वह कुछ कम दिखाई देती। यदि राष्ट्रीय विचारधारा लोगों को पढ़ने और सुनने को ही न मिले तो राष्ट्रीयता का ह्रास होना अवश्यंभावी नहीं होगा तो क्या होगा? अभी भी वक्त है कि गदर के इतिहास को पाठ्यक्रमों में स्थान दिया जाए, जिससे लोग स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये किए गए बलिदानों और कुर्बानियों के मूल्य को आंक सकें। क्या ऐसा हो सकेगा, यह तो आने वाला वक्त और आने वाली पीढ़ी ही तय करेगी।

क्रान्ति के इस सपूत, वीरता के प्रतीक, शक्ति के स्तम्भ, ''बिसेन वंश'' के प्रकाश स्तम्भ, राजा देवीबक्ष की याद में एक स्मारक भवन गोंडा (उत्तरप्रदेश) में बना हुआ है। जो इस वीर पुरुष की याद दिलाता रहता है। पता नहीं वहाँ वर्ष में एक बार अगरबत्ती जलाकर, उनकी तस्वीर पर फूल भी चढ़ाये जाते हैं या नहीं।

दहेज व टीका क्षत्रिय समाज का अभिशाप

– भंवरसिंह मांडासी

ठाकुर साहब रावले में पधारे हुए हैं। मांगिया दरोगा 'कोटड़ी' में खड़ा हुआ बाड़ (कांटों की) ऊपर से झांकता हुआ आवाज देता है, ''ठाकुर साहब आपसे मिलने वास्ते तीन चार मेहमान पधारे हैं।'' ठाकुर साहब जल्दी से कोटड़ी में पधारते हैं व मेहमानों से ''जय माताजी' का अभिवादन करते हुए उन्हें कोटड़ी (कच्ची तिबारी) में ले जाते हैं, जहाँ दो चारपाई व दादोसा के जमानेके चार-पाँच मुढ़े रखे हुए हैं। जिन पर मेहमानों को सुविधानुसार बैठाते हुए स्वयं ठाकुर साहब मूंछों पर ताव देते हुए मध्य में एक मुढ़े पर बिराजते हैं। परिचय होता है व वार्तालाप शुरू हो जाता है। मांगिया दरोगा भी मेहमानों के बैठने के साथ ही लकड़ी की नक्काशीदार ट्रे में चार-पाँच गिलास ठण्डे जल के लेकर पहुँचता है व सबको पिलाता है व तामीरदारी में खड़ा हो जाता है। वार्तालाप से मांगिया समझ जाता है कि मेहमान तो ''भंवरसा'' की सगाई के लिये पधारे हैं।

रावले के अन्दर से ठकुरानीसा भी कांटों की बाड़ में अपने को छुपाते हुए दोनों हाथों के दोनों अंगुठों व पास वाली अंगुलियों से ओढ़ने को छोटा सा त्रिभुजाकार घूंघट बनाए हुए उसके अन्दर से एक आँख से टकटकी लगाये हुए मेहमानों को घूर-घूर कर देख रही हैं व मन ही मन सोच रही हैं कि मेहमान तो निश्चित ही ''भंवर'' की सगाई के लिये पधारे हैं।

मांगिया स्थिति को समझते ही तुरन्त रावले में प्रवेश करता हुआ बाड़ की ओट में छिपी भाभूसा से अर्ज करता है-''जल्दी से चाय-नाश्ता तैयार करो मेहमान तो ''भंवरसा'' री सगाई वास्ते पधार्‌या है।'' भाभूसा की जिज्ञासा शान्त हुई व बांछें खिल गई। वे तुरत-फुरत चाय-नाश्ते की तैयारी में लग गई, क्योंकि ''भंवर'' बी.ए. पास तो है परन्तु शादी व नौकरी दोनों की उम्र पार कर चुका है। सगाई वाले तो पिछले काफी दिनों से आना ही बन्द हो गये थे। कम से कम सगाई करने वाले ''सरदार'' आज पधारे तो हैं। भाभूसा को एक चिन्ता- मिश्रित खुशी का अहसास हो रहा है।

नाश्ता लेकर मांगिया ''कोटड़ी'' में पहुँचता है व मेहमानों को नाश्ता परोसता है। नाश्ते के साथ-साथ सगाई का भी वार्तालाप चलता रहता है। ठाकुर साहब व मांगिया मेहमानबाजी व मिजाजपुरसी में ऐसे लग जाते हैं कि मेहमानों को नाश्ते में ही ठूंस-ठूंस कर छका दिया गया ताकि दोपहर के भोजन से तौबा कर जावें।

''भंवर'' की सगाई पर हुए काफी लम्बे वार्तालाप व विचार-विमर्श के बाद ठाकुर साहब रावले में पधारते हैं व सगाई के समाचार जानने के लिये उतावली व अधीर हो रही ठकुरानी सा को सारे समाचार बताते हैं। ''भंवर की सगाई करने वास्ते तो तैयार हैं क्योंकि बांका बाईसा भी आपणै 'भंवर' के जोड़े का ही है, बांने भी बाईसा के जोड़े को टाबर बहुत घणा दिनां से फिरतां-फिरतां आज मिल्यो है, पर लेण-देण में काची काटे है। टीको इक्यावन हजार व एक हाथ रो गहणों देणें की बात करे है व दात-दहेज को भी सारो सामान देणने तैयार है। आप फरमावो आपने कांई समझ में आवे है।''

''म्हारे कांई समझ में आवे है थे कोनी समझो के जेठसा रे बन्नासा रो टीको तो एक लाख आयोड़ो है व बीनणी के दोन्यूं हाथां रो गहणो बाजू व हथफूलां समेत घाल्यो हो व सारो दात-दहेज रो सामान भी दोलड़ा (डब्बल) दियो हो। जान जुहाँरी भी बढ़िया सूं बढ़िया करी ही। जेठजी व जिठाणीसा रे सोने री

अंगुठियां घाली ही। बारात री खातरदारी में तो कोई कसर नहीं राखी। बारात न दारू भी छिक्काई की पिलाई। जेठसाके तो नशो इतनो ज्यादा होग्यो हो कि पड़ने से बांकी तो एक टांग भी टूटगी ही।''

''म्है कोई जेठसा से हल्का थोड़ा ही हां। दोनूं भाई एक ही मां रे पेट में लोट्‌योड़ा हां, एक ही मां रो दूध पीयोड़ो है। भायां में के हल्का-भारी हुवे है। भाई-भाई तो बराबर का है। आपणे ''भंवर'' रे ब्याव में जेठसा रे ''बन्नासा'' रे ब्याव से टीको, दात-दहेज कम आने से कुटुम्ब-कबीले में आपणी कितनी हल्काई हुवै है। सो मेहमानां ने फरमा दिरावो कि म्हारे ''भंवर'' री सगाई करनी है तो जेठसा रे 'बन्नासा' रे बराबर टीको, दात-दहेज देणो पड़सी नहीं तो जिण पगां पधार्‌या, बांही पगां पाछा पधारो।''

जरा सोचो! क्षात्र धर्म के प्रवर्तकों, बहादुर क्षत्रिय समाज के युवाओं, वृद्धजनों, वीर-प्रसूता क्षत्राणियों आज आपको क्या हो गया है? :-

''धन रजपूती धड़ लड़ै, सह जग करे सराह।
सिर पड़ियो देखे समर, निज मुख कहे न वाह।।''

कहाँ गई आपकी रजपूती? क्या ग्रहण लग गया आपकी रजपूती को? क्या राहू-केतु लील गये आपकी रजपूती को? आज आप इतने कायर, भीरू व डरपोक हो गए हो कि आपके समाज में आदमी बिकने लगे हैं। आदमियों का (टीके व दहेज के रूप में) व्यापार धड़ल्ले से हो रहा है। आपने क्षत्रिय समाज के 'भंवर' (युवा) के ''बिकाऊ टोरड़ा'' बना दिया है। उसके मोल-भाव होने लगे हैं।

मोल-भाव तो पशुओं (ऊंट, घोड़ी, गाय, भैंसों, भेड़-बकरियों इत्यादि) के हुआ करते हैं। इंसान तो ईश्वर द्वारा बनाई गई एक अमूल्य कृति है। इसका कोई मूल्य व कीमत नहीं आंकी जा सकती। क्षत्रिय समाज जिसकी एक-एक गौरवपूर्ण, वैभवशाली व उत्कृष्ट परम्परा रही है। संपूर्ण विश्व को लोहा मनवाने वाले समाज की कन्याओं के विवाह के लिए उसके अभिभावकों को इसी समाज के युवाओं को टीके व दहेज के रूप में खरीदने पर मजबूर होना पड़ रहा है। बन्द करो इस मानुषी व्यापार की शर्मनाक व घिनौनी परम्परा को, नहीं तो क्षत्रिय समाज रसातल में पहुँच जाएगा व भविष्य के इतिहास में राजपूत का नामो-निशान मिट जायेगा। रजपूती केवल इतिहास रह जायेगी।

मोल-भाव करके किसी वस्तु को बेचने पर वस्तु पर मालिक का कोई हक-उजर नहीं रहता है। बकरे को कसाई खरीद कर ले जाएगा तो निश्चित है काटकर उसका मांस बेचेगा। बकरे का कटना निश्चित है। बेचने के बाद बकरे का मालिक तो क्या ईश्वर भी उसे काटने से नहीं रोक पाएगा।

क्या आप अपने 'भंवर' को लड़की वालों को टीके व दहेज के बदले में बेचकर उस पर अपना अधिकार पूर्ववत रखना चाहोगे? कभी नहीं। बिका हुआ भंवर जिसका मालिक अब दूसरा है, क्या वो बुढ़ापे में आपकी सेवा करेगा? क्यों उसे अपने बुढापे का सहारा समझने का झूठा भ्रम पाल रहे हो। बेचे हुए 'भंवर' व आपके मध्य का पिता-पुत्र का पवित्र रिश्ता प्रेम व सहानुभूति खत्म हो जाएगी। अब आप क्यों अपने 'भंवर' के प्रति झूंठे 'वात्सल्य' प्रेम का इजहार कर रहे हो?

आप कर्म ही ऐसे कर रहे हो कि वृद्धावस्था में असहाय व अशक्त होने पर दीन-हीन हालत में चारपाई पर पड़े-पड़े कराहते रहना व मौत का इन्तजार करना कि वो आपको लेने कब आयेगी? मौत के अलावा आपके पास उस समय में कोई नहीं आने वाला है। 'भंवर' की आस लगाये बैठे हो। कहाँ से आयेगा, उसको तो आप पहले ही बेच चुके हो? क्या उसके पीछे आने वाली बहू से भी आपको अन्तिम समय में सेवा की आस है? क्यों आयेगी वो आपके पास? कभी नहीं आयेगी। उसके बाप ने आपके

'भंवर' को बेटी के लिये टीका देकर खरीदा है व दहेज के रूप में सारा सामान नया घर बसाने के लिये दिया है। 'भंवर' अब आपका नहीं बहू का है। वो अपने 'भंवर' को आपके नजदीक भी नहीं रहने देगी। आपसे कोसों दूर ले जाकर ऐसी सुरक्षित जगह अपने पीहर के आस-पास बसायेगी, ताकि आपके 'भंवर' को आपके दु:ख-दर्द का तो क्या आपकी मृत्यु तक का समाचार भी नहीं मिल सके।

अब भी समय है चेतने का, सम्भल जावो। बन्द कर दो क्षत्रिय समाज की इस विध्वंशकारी व कुष्ठ रूपी परम्परा को। क्षत्रिय समाज को इस कुष्ठ रोग से गलने से बचा ले। इन्सानों के सौदे बन्द करो, मत बेचो 'भंवर' को, मत लाओ घर में दहेज रूपी दानव को। बिना दहेज-टीका लिए अपने 'भंवर' की शादी करो। बहू को अपनी बेटी के समान समझो। आपकी आने वाली बहू व आपके मध्य प्रेम, सेवा व प्यार व मिठास के रिश्ते पनपेंगे। 'भंवर' व बहू के हृदय में आपके प्रति अगाध प्रेम का समुद्र हिलौरें मारने लगेगा जो 'भंवर' व बहू को आपसे दूर नहीं जाने देगा व आपकी सेवा के लिये हरदम तत्पर रखेगा। आपके बुढ़ापे की मुरझाई हुई बगिया पुन: लहलहायेगी। इस बुढ़ापे की बगिया में आपके 'भंवर' व बहू द्वारा दिये गये प्रेम रूपी जल से आप सराबोर हो जाओगे व बाल्यावस्था व युवावस्था के बीते दिनों को भी भूलते नजर आओगे। धन्य हो जाएगा आपका जीवन।

आप ही नहीं आपका मृत प्राय: हो रहा यह क्षत्रिय समाज भी जीवन्त हो उठेगा तथा आप भी समाज ऋण से उऋण होने का पुण्य कमाओगे व स्वर्ग में अपना स्थान सुरक्षित पाओगे।

गुलाम वंश में होता था इन्सानों का सौदा,
जिसका मिट गया आज नामो निशान।
क्षत्रिय समाज में होते थे रण-खेत के सौदे,
जिसमें आज होने लगे हैं इन्सानों के सौदे।

क्या कोई शक्ति जीवित रख पायेगी इस समाज को,
कभी नहीं? कभी नहीं?? कभी नहीं???
जीवित रखना है यदि इस समाज को,
तो बन्द कर दो इन्सानों को बेचने की हैवानियत को।

महाराणा की सीख

– ईश्वरसिंह ढीमा

महाराणा प्रताप हमें सिखाते हैं
विपरीत परिस्थितियों में
खड़े रहें
अपने कर्तव्य पथपर
अडे रहें,

महाराणा प्रताप हमें सिखाते हैं
सब कुछ खोकर भी
अपने को बचा लेने का हूनर
समय की धार पर चलना
वक्त के अनुरूप ढलना
और भीतर
एक भट्ठी सा जलना
ताकी आग बची रहे

महाराणा प्रताप हमें सिखाते हैं
आग को संजाने की कला
आग को संजाने वाले ही
जिन्दा रहते हैं युगों युगों तक।।

अपनी बात

समाज के प्रति प्रेम की बात तो अक्सर चर्चा का विषय रहता है। चर्चा में लगभग सभी लोग यह भी मानते हैं कि हम समाज से प्रेम करते हैं। कैसा प्रेम करते हैं, इस पर शायद ही कभी गहराई से विचार किया हो।

तीन प्रकार के प्रेम बताये गये हैं। क्योंकि मनुष्य के भीतर जीवन के तीन तल हैं। एक तो शरीर का प्रेम होता है। उसे भी बताना कठिन होता है, लेकिन फिर भी इतना कठिन नहीं होता, क्योंकि स्थूल है; स्थूल-स्थूल का नाता है। फिर दूसरा प्रेम मन का प्रेम होता है। उसे बताना और कठिन हो जाता है। क्योंकि मन को देखा किसने है। न उसका माथा है, न उसका शरीर है। अशरीरी है। इस मन के प्रेम को कैसे प्रकट करो! और कोई अगर इन्कार करे तो सिद्ध नहीं कर पाया जाता।

शरीर का प्रेम तो दिखलाने के उपाय हैं। किसी को छाती से लगा लो तो शरीर का प्रेम पता चल जाता है। समाज के प्रेम के प्रति अच्छी-अच्छी शब्दावली प्रकट की जा सकती है। अच्छे-अच्छे उदाहरण दिए जा सकते हैं, जिससे पता चल सकता है कि व्यक्ति समाज को प्रेम करता है। मैं समाज के लिए यह कर रहा हूँ, वह कर रहा हूँ, ऐसे प्रेम किया जा सकता है।

मन के प्रेम को कैसे प्रकट किया जाए? हाँ जिससे प्रेम है, उसे शायद समझ में आ जाए। वह शायद व्यक्ति की भाव भंगिमा से समझ ले, व्यक्ति की मुद्रा से पहचान ले। व्यक्ति के शब्दों में छिपा हुआ रस, उसके उठने-बैठने में, उसकी आतुरता में, उसकी आँखों में उसे थोड़ी झलक मिल जाए शायद- वह भी शायद। क्योंकि कहना पड़ता है, तभी समझ में आता है। कहने का अर्थ हुआ कि मन को शरीर तक लाना पड़ता है। जो कही गई बात है वह तो शरीर की हो जाती है। शब्द तो शरीर से पैदा होते हैं। मन की बात तो मन में रहती है। मन की बात तो मौन में होती है। लेकिन कभी-कभी कोई इस ऊँचाई तक आ जाते हैं कि शब्दों की जरूरत नहीं रहती। समाज में कार्य करते हैं। जहाँ आवश्यकता हो पहुँच जाते हैं। जो पीड़ित हो उसकी पीड़ा को दूर करने का प्रयास करते हैं। एक उल्लास होता है। किस भाव से कर रहे हैं यह तो पता नहीं होता। अपने आप को पुजवाना चाहते हों इसलिए कर रहे हैं या भाव भी पवित्र है इसलिए समाज में सक्रियता बनी हुई है।

फिर एक तीसरी प्रकार का प्रेम बताया गया है- आत्मा से आत्मा का। उसे कहने का कोई उपाय ही नहीं है। वह तो इतना गूढ है कि सब अभिव्यक्तियों के पार है। वही शिष्य और गुरु का प्रेम है। उसे तो गुरु समझता है, शिष्य समझता है। वह तो बिल्कुल चुप-चुप है। वहाँ कोई निवेदन करने का कारण ही नहीं होता। वह तो अन्त:सलिला है, भीतर की गंगा है। समझाने में मुश्किल में पड़ जाएँगे। वह नि:शब्द की लीला है। मौन का संगम है। सेवक और समाज के बीच कोई संवाद नहीं सेवा के बारे में। समाज के साथ ही जैसे एकाकार हो जाना है। वह सेवा भाव सारे जीवन में फैल जाता है। जागृति से लेकर स्वप्न तक, स्वप्न से लेकर जागृति तक। सेवा भाव इतनी सघनता से पकड़ता है कि जीवन के सब तलों तक फैल जाता है। जागृति में भी उसी की याद बनी रहती है। कई कामों में उलझे हुए हों मगर सेवाभाव की धुन बनी रहती है। कैसे भी उलझे रहें मगर सेवाभाव की भूल नहीं होती। सेवाभाव जागृत रहता है और पूरे चौबीस घंटों को घेर लेता है।

प्रयाग के महातीर्थ पर तीन नदियाँ आकर मिलती हैं। गंगा है, यमुना है और सरस्वती है। दो तो दिखाई पड़ती है, तीसरी दिखाई पड़ती नहीं। वह तीसरी ही प्रेम

अथवा सेवाभाव की अन्तिम ऊँचाई है। वही सरस्वती है। गंगा तो बताई जा सकती है, यमुना भी बताई जा सकती है। मगर सरस्वती को बताना चाहें तो मुश्किल में पड़ जाएँगे। कोई बता नहीं सका। उसे अदृश्य ही रखा है। दुनिया में बहुत संगम हैं, लेकिन जैसा महातीर्थ यहाँ बनाया गया एक अदृश्य नदी के साथ जोड़कर, वैसा किसी ने कहीं देखा नहीं है। दो दृश्य हैं, एक अदृश्य है। और जो अदृश्य है वह सारे दृश्यों का आधार है। अपने सेवाभाव को सरस्वती की तरह अदृश्य बनाएँ। न वर्णन है, न दिखावा है, कुछ प्रकट करने की आवश्यकता नहीं। सेवा की इस सरस्वती को अदृश्य ही रहने दें, तभी यह आधार बनेगी।

क्या हमने कभी आत्मावलोकन किया है कि हमारा समाज के प्रति प्रेम इन तीनों प्रकार के प्रेम में किस प्रकार का है। निरन्तर आत्मावलोकन नहीं हुआ तो हम पहले प्रकार के सामाजिक प्रेम की परिधि में ही समय गंवा रहे हैं, उलझ रहे हैं। आत्मावलोकन भली प्रकार निरन्तर चलता रहा तो समाज से निर्वाच्य जुड़ाव की स्थिति आएगी जहाँ वाणी सरस्वती नदी की तरह अदृश्य ही रहेगी बस समाज से संगम की बनेगा।

शिविर सूचना

यह सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष है कि श्री क्षत्रिय युवक संघ के आगामी प्रशिक्षण शिविर निम्न प्रकार से होने जा रहे हैं –

क्र.सं.	शिविर	समय	स्थान, मार्ग आदि
01	उ.प्र.शि. (बालक)	18.5.2023 से 29.5.2023	भवानी निकेतन, जयपुर

18 मई को प्रात: 8 बजे तक शिविर स्थल तक पहुँचना है। पूर्व में दो प्रा.प्र.शि. व एक मा.प्र.शि. किए हुए हों तथा दसवीं की परीक्षा दी हुई हो। पूरा शिविर नहीं करने वाले पूर्व अनुमति लेकर 23 मई को आ सकेंगे। 29 मई से पूर्व जाने की स्वीकृति नहीं होगी। शिविर शुल्क प्रति शिविरार्थी 100 रुपये शिविर में देय होगा। निर्देशिका, झनकार, मेरी साधना व साधना पथ पुस्तकें तथा निर्देशिका में शिविर हेतु वर्णित सामग्री साथ लेकर आनी है। सायंकालीन प्रार्थना की गणवेश धोती-कुर्ता व केशरिया साफा होगी एवं प्रात:कालीन प्रार्थना में संघ की गणवेश अनिवार्य है।

02	मा.प्र.शि. (बालिका)	23.5.2023 29.5.2023	भवानी निकेतन, जयपुर

पूर्व में न्यूनतम दो शिविर किये हुए हों। दसवीं की परीक्षा दी हुई हो। शिविर शुल्क प्रति शिविरार्थी 50 रुपये शिविर में देय होगा। निर्देशिका में शिविर हेतु वर्णित सामग्री एवं संघ की गणवेश साथ लेकर आनी है। सायंकालीन प्रार्थना में यथासंभव परम्परागत केशरिया गणवेश लेकर आयें। विवाहिता महिलाएँ वे ही शामिल हो सकेंगी जिनको आमंत्रित किया जाएगा। बालिकाओं के साथ आने वाले व वापस लेकर जाने वाले स्वयंसेवकों को भी पूर्व अनुमति लेना आवश्यक होगा एवं उनकी भी गणवेश आवश्यक है।

दीपसिंह बेण्याकाबास

शिविर कार्यालय प्रमुख, श्री क्षत्रिय युवक संघ

मेवाड़ को भावी नेतृत्व प्रदान करने हेतु युद्ध के दौरान महाराणा प्रताप के प्राणों के रक्षार्थ अपने प्राणों की आहूति देने वाले युग-पुरुष झाला मान की जयन्ती (ज्येष्ठ शुक्ल द्वितीया) के अवसर पर सादर वन्दन, नमन ।

ठा. भंवर सिंह, ठा. बलवंत सिंह, ठा. भरत सिंह , ठा. अभय सिंह, ठा. सुरेंद्र सिंह, ठा. महेंद्र सिंह , ठा. हुकुम सिंह , कुं. लक्ष्मण सिंह, कुं. राम सिंह, कुं. पृथ्वीराज सिंह एवं समस्त झाला परिवार

ठिकाना: - खाखराखेड़ा-झाडोल, उदयपुर

मई, सन् 2023
वर्ष : 60, अंक : 05

समाचार पत्र पंजी.संख्या R.N.7127/60
डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City /411/2023-25

संघशक्ति

ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा,
जयपुर-302012
दूरभाष : 0141-2466353

E-mail : sanghshakti@gmail.com
Website : www.shrikys.org

श्रीमान्..

....

....

स्वत्वाधिकारी श्री संघशक्ति प्रकाशन प्रन्यास के लिये, मुद्रक व प्रकाशक, लक्ष्मणसिंह द्वारा ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर से : गजेन्द्र प्रिन्टर्स, जैन मन्दिर सांगाकान, सांगों का रास्ता, किशनपोल बाजार, जयपुर फोन : 2313462 में मुद्रित। सम्पादक-लक्ष्मणसिंह